

मृत्यु के बाद चेतना का क्या होगा? क्या मौत के बाद क्या चेतना अस्तित्व में रहती हैं या शरीर के साथ खतम हो जाती है

तुम्ही से

नव अस्तित्व की तलाश

तृतीय अंक

ग्रीष्म 2016

सुषुप्ति (SLEEP STATE)

जाग्रित (WAKEFUL STATE)

अति जाग्रित

SUPER-CONSCIOUS

STATE

प्रस्तुत अंक: चेतना है क्या?

संपादन— स्वर्ण जे. ओमकार

डिजिटल संस्करण

तुम्ही से

जीवन में चेतना का ज्ञान होना अति आवश्यक है. यह ज्ञान एक विशेष तरह की साइको-थेरेपी के लिए है. प्रस्तुत अंक में हमने चेतना के अलग अलग पहलुओं की चर्चा की है.. किसी धार्मिक या अन्य ऐसे कारण से इस महत्वपूर्ण विषय की उपेक्षा कर देना समझदारी नहीं. "चेतना" हमारी प्राकृतिक साइंस का विषय है. क्वांटम फिजिक्स में इस पर बहुत रिसर्च हुई है.



क्या

कहां

प्रस्तुत अंक: चेतना क्या है ?(4)

संपादक की कलम से(6)

मनुष्य का स्वै प्रकाशित प्रकाश चेतना है (8)

डॉ परमजीत चुंबर (यू एस ए) की कलम से (10)

चेतना की असली ध्यानस्थ अवस्था (12)

जीव की विकास यात्रा (14)

चलिये शाश्वत गंगा की खोज करें (ललित निबंध) (16)

क्या है चेतना द्वारा निर्देशित "इनर पीस" (20)

मृत्यु के बाद चेतना का क्या होगा? (22)

चेतना को चेतन करना क्या है? (26)

चेतना को चेतन करना -कैसे?(27)

चेतना की अवस्थाएं (29)

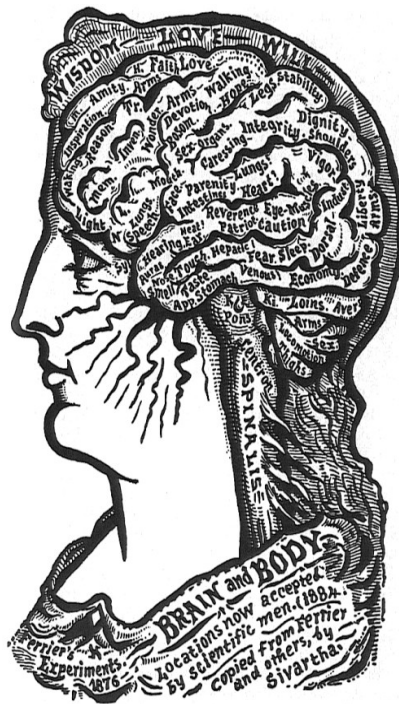
आत्मा की आवाज़(33)

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से चेतना (35)

व स्थाई स्तम्भ

पंकज शर्मा

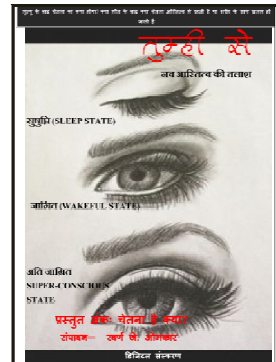
‘तुम्ही से’



"चेतना है क्या?"

iswaran09@gmail.com

प्रस्तुत अंक: चेतना क्या है ?



जब हम इस सवाल पर गहन विवेचना करते हैं कि- What Is Consciousness? चेतना क्या है? तो हमें किसी पुस्तक, धार्मिक सहित्य या किसी जाने पहचाने दार्शनिक या लेखक की तरफ रुख करने से पहले हमें अपने पर केवल अपने शारीर मन पर अपना विचार केंद्रित करना होगा.

चेतना हमारी जागृत अवस्था है. वेदों में शास्त्रों में चेतना को "चित्" कहा गया है. जिस का अर्थ है- प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करना, देखना, चौकस या सतर्क होना. जब चेतना को हम विषयाश्रित (**objectify**) करते हैं तो उस के अर्थ हो जाते हैं- विचार करने वाली, प्रज्ञा, बुद्धि, मन, आत्मा, जीवन या ब्रह्म इत्यादि. प्राणी में जीवन के स्वरूप में पाई जाने वाली चेतना का आभास हमें होता है. बहुधा हम कहते हैं- मेरा चित् अच्छा नहीं. मेरा चित् नहीं करता या मेरा चित् नहीं कह रहा कि मैं यह काम करूँ. हमारा चित् हमारी अंतरीव अवस्था है. हमारा शरीर भले अच्छा हो. लेकिन अगर मन ठीक नहीं चित् अच्छा नहीं तो हम बाह्य संसार से बढ़िया ताल मेल नहीं बिठा पाते.

साधारणतः चित् यानि चेतना को मन या आत्मा के तुल्य ही माना जाता है. थोड़े से फ़र्क के साथ ये एक ही हैं. शारीर में हम दो ही हैं. एक भौतिक शारीर और एक सूक्ष्म चेतना. जब हमने चेतना (जीवों की जागृत अवस्था) को समझ लिया तो शेष मन बुद्धि आत्मा को समझना आसान है. शेष मन, आत्मा, बुद्धि इत्यादि चेतना की ही अलग अलग अवस्थाएं हैं. चेतना हमारे अस्तित्व की एक प्राकृतिक अवस्था है चेतना के बिना हमारा भौतिक शारीर मृत है गतिहीन है सोया पड़ा है या अत्यन्त थका हुआ, बिगड़ा हुआ है. हमारे शरीर को पुनः सुव्यवस्थित करने के लिए चेतना पहले स्वयं सुव्यवस्थित होती है. चेतना कई तरह से हमारे भौतिक शरीर व दिमाग से जुड़ी हुई है और उस की स्थिति से प्रभावित होती रहती है.

चेतना का सीधा संबंध दिमाग के साथ होता है. तो दिमाग में आखिर चेतना आती कहाँ से है? इस सवाल का जवाब वैज्ञानिक आज भी ढूँढने में असमर्थ है. ज्यादातर वैज्ञानिकों का मानना है कि चेतना दिमाग के अन्दर होती केमिकल क्रियाओं का नतीजा होती है. तो फिर क्या छोटे अभी अभी जन्मे बच्चे चेतन होते हैं? इसका जवाब है हा. क्योंकि छोटे बच्चे भी घटनाओं पर प्रतिक्रियाएं करते हैं. जैसे कि भूख लगने पर रोना, हँसाने पर हँसना. चेतना का हमारे मस्तिष्क की स्थिति से इतना गहरा सम्बन्ध है कि किसी ऐसे केमिकल से जिस से दिमाग प्रभावित होता है - हम चेतना की अवस्था को प्रभावित कर सकते हैं. जैसे नींद की टिकिया से हम जागृत चेतना को सुषुप्त चेतना में तब्दील कर सकते हैं.

चेतना हमारे जागरूक की होने की निशानी है. केवल जागरूक (अवेयर) होना और स्व जागरूक (**Self-aware**) होने का मतलब अलग अलग होता है. जब हम केवल जागरूक होते हैं तो चेतना का प्रवाह भीतर से बाहर की ओर होता है. हम न जानते हैं और न जानना चाहते हैं कि हम कोई विशेष काम क्यों कर रहे हैं गुस्सा क्यों हो रहे हैं क्यों उदास हैं इत्यादि. स्व जागरूकता (**Self-aware**) की स्थिति में चेतना का प्रवाह बाहर से भीतर की ओर होता है और तब हम स्वयं को टटोल रहे होते हैं. स्व-पडचोल कर रहे होते हैं. अपनी अंतरात्मा के भीतर झांक रहे होते हैं.

स्व जागरूक होने का मतलब है- किसी को उसकी भावनाएं, विशेषताएं और उसके अस्तित्व के बारे में पता होना और इन सब का मतलब समझने के लिए उसका सक्षम होना. स्व जागरूक को सीधी भाषा में समझें तो उसका मतलब होता है किसी भी पैटर्न्स को समझ लेना और उसे अपने साथ होती घटनाओं से जोड़ना. चेतना सारी सृष्टि में प्रेरणादायक और सृष्टि को चलाने वाली एक क्षमता है. चेतना के होने के लिए उसके कारण का होना जरूरी है. हमारी चेतना हमारे लिए इस दुनिया को अवलोकन करने योग्य प्रभाव पैदा करती है.

ऐसे कई सवाल ले कर और उन के अर्थों की तलाश में 'तुम्ही से..' का नया अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है.

निवेदन: स्वर्ण जे. ओमकार

"अहंकार, क्रोध, प्रमाद, रोग और आलस्य- इन पांच कारणों से व्यक्ति शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकता।"- अज्ञात

तुम्ही से...

मानवीय चेतना का दर्पण

तृतीय अंक

ग्रीष्म 2016



संपादक की कलम से...

मान्यवर...

चेतना है क्या? चेतना प्राणी के प्राणी होने की विशेषता है. वरना वह एक निर्जीव पत्थर है, भौतिक तत्वों या केमिकल्स का एक पुंज है. एक ऑटोमेटा (automata) मशीन है. वह केवल भौतिक शरीर ही है. चेतना इस भौतिक शरीर को जीवित रखती है और जो उसे व्यक्तिगत विषय में तथा अपने इर्द गिर्द वातावरण के विषय में ज्ञान कराती है। यही ज्ञान शक्ति चेतना की मुख्य विशेषता है. वेदों में शास्त्रों में चेतना को "चित्" कहा गया है. जब चेतना को हम objectify करते हैं तो उस के अर्थ हो जाते हैं- विचार करने वाली, प्रज्ञा, बुद्धि मन आत्मा जीवन इत्यादि. ज्ञान को विचारशक्ति (बुद्धि) कहा जाता है। यही विशेषता मनुष्य में ऐसे काम करती है जिसके कारण उसे जीवित प्राणी समझा जाता है।

मनुष्य अपनी कोई भी शारीरिक क्रिया तब तक नहीं कर सकता जब तक कि उसको यह ज्ञान पहले न हो कि वह उस क्रिया को कर सकेगा या उसे उस क्रिया से यह लाभ होने वाला है. कोई भी मनुष्य किसी घातक पदार्थ अथवा घटना से बचने के लिए अपने किसी अंग को तब तक नहीं हिला सकता, जब तक कि उसको यह ज्ञान न हो कि कोई घातक पदार्थ उसके सामने है और उससे बचने के लिए वह अपने अंगों को काम में ला सकता है।

उदाहरणार्थ, हम एक ऐसे मनुष्य के बारे में सोच सकते हैं जो एक जंगल की ओर जा रहा है। यदि वह चलते-चलते जंगल तक पहुँच जाता है और जंगल में घुस जाता है तो वह अब और ज्यादा सतर्क हो जायेगा. वह हर सरसराहट और हर सुगंध हर नज़र आती हरकत के प्रति ज्यादा सचेत हो जायेगा. वह अपना सतर्क व्यवहार तब तक जारी रखता है जब तक वह दोबारा सुरक्षित वातावरण में नहीं चला जाता या जंगल में कोई सुरक्षित जगह नहीं ढूँढ लेता. बस यही सतर्कता चेतना का काम है हमारे लिए. प्राणी के जीवन को सुरक्षित रखना चेतना का मुख्य दायित्व है. चेतना न केवल बाह्य खतरों से हमें सुरक्षित रखती है बल्कि यह भीतरी मुसीबतों, परेशानियों, रोगों, इंफेक्शन्स इत्यादि से बचाना भी चेतना का ही काम है.

मनुष्य की सभी क्रियाओं पर उपर्युक्त नियम लागू होता है चाहे, ये क्रियाएँ पहले कभी हुई हों अथवा भविष्य में कभी हों। मनुष्य केवल चेतना से उत्पन्न प्रेरणा के कारण ही कोई काम कर सकता है। प्रस्तुत अंक में चेतना से सम्बंधित वह तमाम जानकारी है जो एक प्रबुद्ध ज्ञानवान या ज्ञान पिपासु व्यक्ति को होनी चाहिए. हाँ. हम चेतना के अति सूक्ष्म और अग्रिम जानकारी जिस पर केवल विशेषज्ञों का वर्चस्व है देने से गुरेज़ कर रहे हैं.

हमारा इस अंक का उद्देश्य केवल इस बेसिक विषय में आप की उत्सुकता को बढ़ाना है. और हम यह भी चाहेंगे की आप इस सम्बन्ध में और जानकारी प्राप्त करने के लिए ललायत हों.

आप स्वयं खोज करें. मन में सवाल पैदा करें और उन पर काम करें. हमारे हर प्रश्न का उत्तर चेतना में संहित है. अगर किसी प्रश्न का जवाब नहीं मिल रहा हो तो कुछ दिन चेतना को उस पर काम करने दें. जवाब अपने आप आप की पकड़ में आ जायेगा.

हमें आप की प्रतिक्रिया की अपेक्षा रहेगी.

-स्वर्ण ओमकार

(संपादक)

मनुष्य का स्वै प्रकाशित प्रकाश चेतना है

-स्वर्ण ओमकार



जनक याज्ञवल्क्य से पूछते हैं "जो स्वयं को उजागर करता है और दूसरों को उजागर करता है, वह किसका प्रकाश है?

याज्ञवल्क्य ने कहा: "लोगों को इस दुनिया में जो कार्य करने में मदद देता है वह सूरज प्रकाश का स्रोत है।"

जनक दोबारा पूछते हैं "जब सूरज डूबता है, और समस्त संसार अंधेरे में खो जाता तब किसका प्रकाश लोगों को कार्य करने में मदद करता है?

तब याज्ञवल्क्य कहते हैं " तब चांदनी उनकी सहायता करती है। सूर्य नहीं है, अब चंद्रमा है। चांदनी की मदद से, लोग काम कर सकते हैं।"

" अगर चांदनी नहीं है और सूरज की रोशनी नहीं है लेकिन, अब किस की मदद से कार्य होता है. वह किस का प्रकाश है?

"तब आग का प्रकाश तो है। कोई सूरज और कोई चाँद नहीं, तब मनुष्य जल रही आग के प्रकाश से अपने काम कर सकते हैं।

" अगर आग भी वहाँ नहीं है चांदनी नहीं है और सूरज की रोशनी भी नहीं है तब किस का प्रकाश मनुष्य की मदद करता है?

"सूरज डूब जाता है, चंद्रमा वहाँ नहीं है और जब आग भी जल नहीं रही है जब बाकी सब कुछ विफल हो जाता है तब आवाज़ से और वार्तालाप के द्वारा लोग काम कर सकते हैं।"

"लेकिन कोई भी आप के आसपास नहीं है और कोई भी आवाज नहीं, तो आप कैसे कार्य करेंगे आप के आसपास कोई नहीं है; कोई आवाज नहीं आ रही है; बाहर से किसी भी तरह का कोई इशारा भी नहीं है; आप कुछ भी पता नहीं लगा सकते हैं; सब कुछ काला है; सूरज चला गया है; चाँद चला गया है; आग जली नहीं है- प्रकाश तब क्या है किसका है?

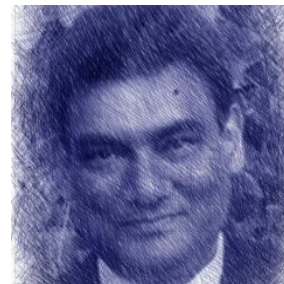
" तब यह स्वयं का प्रकाश है; तब आप अपने आप से, अपने स्वयं से आत्म से चेतना से मार्गदर्शन लेते हैं.

आप अपने स्वयं के लिए एक रोशनी है आप जब तक बाहर के प्रकाश स्रोत पर निर्भर कर रहे हैं और जब तक हम सिर्फ भीड़ में से एक हैं लेकिन हम वास्तव में भीड़ में एक नहीं हैं; हम अपने स्वयं (self) की एक अवस्था (state) है। लेकिन हमें अपने स्वै का, आत्म चेतनता का ज्ञान नहीं होता और हम बाह्य स्थितियों पर निर्भरता की वजह से आत्म चेतनता के प्रकाश से अनजान रहते हैं. हम निर्भरता के माहौल में पल रहे हैं, माता-पिता पर, अध्यापकों पर, समाज पर, , पैसे पर, धन पर - हमेशा की तरह, हम किसी न किसी पर निर्भर हैं।

जनक और याज्ञवल्क्य का यह संवाद बृहदारण्यक उपनिषद् से लिया गया है. इस संवाद से एक और बात स्पष्ट रूप में उजागर होती है कि इस में कहीं भी गॉड, परमात्मा, गुरु, पूर्व पुण्य या कर्म या देवी देवता से प्रकाश लेने की बात नहीं कही गई है.

लेकिन क्या ऐसा भी हो सकता है कि हम बिना माध्यम के जगत को देख सकें? क्योंकि जब हम बिना माध्यम से जगत को देखेंगे तभी सत्य दिखाई पड़ेगा। इसलिए ऋषियों की जो गहनतम खोज है वह यह है कि जब तक इंद्रियों से हम जगत को जानते हैं, तब तक जिसे हम जानते हैं वह जगत के ऊपर इंद्रियों के द्वारा आरोपित प्रक्षेपण है; उसी का नाम माया है। जो आपने देखा है वह दृश्य ही नहीं है, देखने वाला भी उसमें संयुक्त हो गया है। तो एक तो मार्ग है इंद्रियों के द्वार से, जो सत्य का विस्तार है उसे जानने का। इस सत्य को जानने से जो शान हमारी पकड़ में आता है, जिन्होंने इंद्रियों के पार भी जगत को देखा है वे कहते हैं, वह शान हमारा इलूजरी है, माया है। जब शंकर जैसा व्यक्ति कहता है यह जगत माया है, तो आप यह मत समझना कि वह यह कहता है कि यह जगत नहीं है। यह जगत बिल्कुल है, लेकिन जैसा आपको दिखाई पड़ रहा है, वैसा नहीं है। वैसा दिखाई पड़ना आपकी दृष्टि है, वही दृष्टि इस जगत को माया बनाए दे रही है। जैसा जगत आपको दिखाई पड़ रहा है, वह आपकी व्याख्या है। --- (ओशो)

डॉ परमजीत चुंबर (यू एस ए) की कलम से ...



(आज कल अपने दोस्त डॉ स्वर्ण ओमकार की अंग्रेजी पुस्तक "भीतर की दुनिया की एबीसी" पढ़ रहा हूँ। डॉक्टर साहिब ने एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से दर्शन और अध्यात्म का पडचोल की है। एक दिन उन से फ़ोन पर पुस्तक के बारे विचार-विमर्श हुआ जिस में ज्ञान और जागरूकता के बारे लम्बी बात हुई। डॉक्टर साहिब ने कहा कि ज्ञान का विस्फोट सभी समस्याओं की जड़ है। वे कहते हैं कि अनवश्यक ज्ञान को छोड़ना ज़रूरी है और चेतना की तरफ जाना चाहिए। इस पुस्तक के आधार पर, मैंने दैनिक जीवन से एक घटना ले कर एक कहानी लिखी है। चेतन (जागरूकता), ज्ञान (बुद्धि या ज्ञान) और रौशनी (अध्यात्म) को एक रूपक के रूप में प्रयोग किया है .. शेष आप जो भी समझें ...)

एक यात्रा की कहानी

ज्ञान व चेतन दो दोस्त हैं। दोनों की रौशनी नाम की एक साझी दोस्त है। एक दूरदराज के गांव में रौशनी रहती है। पहली बार दोनो ने रौशनी से मिलने का कार्यक्रम बनाया है। ज्ञान के पास एक कार है। लेकिन चेतन अच्छा चालक है और उस ने कार चलाई। 3-4 घंटे लंबी यात्रा। ज्ञान अपने साथ दर्शन (Philosophy) की एक किताब ले लेता है, रास्ते में पढ़ने के लिए। ज्ञान पीछे की सीट पर बैठा है। उस के पास रौशनी के शहर का एक नक्शा है।

"तीसरे चार घंटे का हाईवे का सफर है। बस नाक की सीध पर चलता जा." ज्ञान यात्रा के बारे में बता कर दर्शन की किताब में गुम हो जाता है।

चेतन बढ़िया ड्राइविंग कर रहा है। हर तरफ देख कर बच कर। एक बार चेतन को लगा की उस के आगे की गाड़ी वाला कुछ धीमी गति से चल रहा है। वह सिग्नल दे कर उस गाड़ी को क्रॉस करने की कोशिश करता है। लेकिन पीछे की गाड़ी वाला हॉर्न दे कर तेज़ गति से पहले निकलने की कोशिश करता है। चेतन को खीझ आ जाती है। "दीखता नहीं किधर को मुंह उठा कर चल रहे हो", चेतन मन ही मन उसे गली देता है। पिछली गाड़ी वाला काफी तेज़ था। ज्ञान का ध्यान भी उखड़ जाता है।

"यार, गर्दन घुमा कर ब्लाइंड स्पॉट तो चेक कर लिया कर। पिछली कार बहुत जल्दी में थी, खैर बचा हो गया." ज्ञान अपना ज्ञान झाड़ रहा है।

"कोई बात नी, तुम अपनी किताब में मस्त रहो. चेतन और अधिक सचेत हो कर गाड़ी चल रहा है.

ज्ञान को भूख लगी है और चेतन ने बाथरूम जाना है। ज्ञान अगले एग्जिट से बाहर आने के लिए कहता हैं। ज्ञान **Mcdonald** से कोक और सैंडविच लेता है। चेतन केवल चाय पीता हैं। यात्रा पर वह अधिक खाता पीता नहीं.

खाने और पीने के बाद गाड़ी फिर राजमार्ग पर आ गई है। ज्ञान की आँख लग गई है.

चेतन अपनी धुन में गाड़ी चला रहा है। अचानक ज्ञान की आंख खुल जाती है। बाहर देखता है। और फिर नक्शा देखने के बाद घबरा जाता है.

"ओ चेतन, हम एग्जिट पीछे छोड़ आए है."

"अब !!!?" चेतन पूछता है।

"तुम गाड़ी बाहर की ओर निकल कर साइड पर लगा लो", ज्ञान बताता हैं।

ज्ञान अब सामने की सीट पर नक्शे को हाथ में पकड़ कर बैठ जाता है. चेतन वाहन पीछे की ओर मोड़ रहा है.

ज्ञान उसे बता रहा है। पीछे वाहनों की लंबी कतार है. चेतन सावधानी से गाड़ी बहार निकालता है. अब ज्ञान चेतन को दाएं बाएं की चेतावनी दे रहा है. छोटी संकीर्ण गलियों से निकल कर काफी देर बाद वे रौशनी के घर पहुँच जाते हैं. बाहर काफी अंधेरा है।

"यार, यह रौशनी भी कुछ अजीब चीज़ है. कहाँ जंगल में आ कर रहने लगी है", ज्ञान कहता है।

रौशनी इंतजार कर के थक गई है.

"आप लोग इतने लेट कैसे हो गए ?" रौशनी पूछ रही है.

"इस से पूछ...."

ज्ञान चेतन की तरफ इशारा करता है.

मेरी तो चाय भी उबल उबल कर पागल हो गई.

"हमारा रास्ता खो गया था" चेतन ने सफाई पेश की।

"वह कैसे? नक्शा तो आप के पास था " रौशनी ने हैरान हो कर पूछा।

चेतन ने ज्ञान की ओर इशारा किया "ये जनाब जंक फूड खा कर और दर्शन की किताब पढ़ते पढ़ते पिछली सीट पर सो गए.

मानचित्र भी इन के पास था।"

"अब, तो एक सबक मिल गया न?" रौशनी ने पूछा.

"कौन सा ?" दोनों हैरान हो कर पूछते हैं।

"आगे से गाड़ी चलते समय इसे आगे की सीट पर बिठाया कर और जंक फूड तो बिल्कुल नहीं दिया कर।" रौशनी ने जवाब दिया।

"तुम ने तो प्रकाश कर दिया रौशनी" ज्ञान का कहना है

तीनों हँसते हुए चाय की मेज़ पर बढ़ते हैं.

(डॉ परमजीत चुंबर वेस्ट वर्जिनिया में कंसलटेंट साइकेट्रिस्ट हैं.... संपादक)

चेतना की असली ध्यानस्थ अवस्था- कार्य-मुक्त होना या कार्य-लिप्त होना?

-स्वर्ण ओमकार



-----एक सुंदर कहानी है जो मन की तनावपूर्ण व ध्यानशील स्थिति के अंतर को बताती है जो एक व्यक्ति में एक ही समय में मौजूद हो सकती हैं. यह दृष्टान्त काफी प्राचीन है और महान महाकाव्य महाभारत के रचयता, ऋषि वेद व्यास के पुत्र षुखदेव और राजा जनक जो एक महान आध्यात्मिक साधक व शासक थे से संबंधित माना जाता है- यह कहानी कुछ अन्य भारतीय ग्रंथों में भी उपलब्ध है- इसका एक और आधुनिक संस्करण ब्राजील के लेखक पाउलो कोहिलो की महान कलाकृति 'कीमियागर-**Alchemist**' में भी मिलता है- मैं दोनों में से केंद्रीय विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ- एक पिता आध्यात्मिक जीवन में दीक्षा के लिए और जीवन के कुछ गहरे सत्य जानने के लिए एक बहुत बुद्धिमान व्यक्ति के पास अपने युवा नवोदित बेटे को भेजता है- बहुत संघर्ष के बाद लड़का उस जगह पहुंच जाता है- उसे पता चलता है कि वह बुद्धिमान व्यक्ति एक पैलेस या कहीं एक विशाल हवेली में रह रहा था- जिस समय लड़का वहाँ पहुंचा बुद्धिमान आदमी कुछ मेहमानों के साथ व्यस्त था- उस ने युवा लड़के से प्रतीक्षा करने के लिए कहा और कहा कि प्रस्तावित समय का उपयोग करने के लिए लड़का महल को देख ले- कुछ सोचकर बुद्धिमान व्यक्ति एक और सुझाव दिया. लड़का अपने साथ एक तेल से भरा एक दीपक ले जाये और निर्देश दिया कि दीपक से तेल बाहर नहीं जाना चाहिए. लड़के ने उसकी बात मानी और महल का दौरा करने के बाद वापस आ गया- बुद्धिमान आदमी अब अकेले थे- लड़का कुछ मननशील बात करने के लिए लालायत था लेकिन बुद्धिमान व्यक्ति

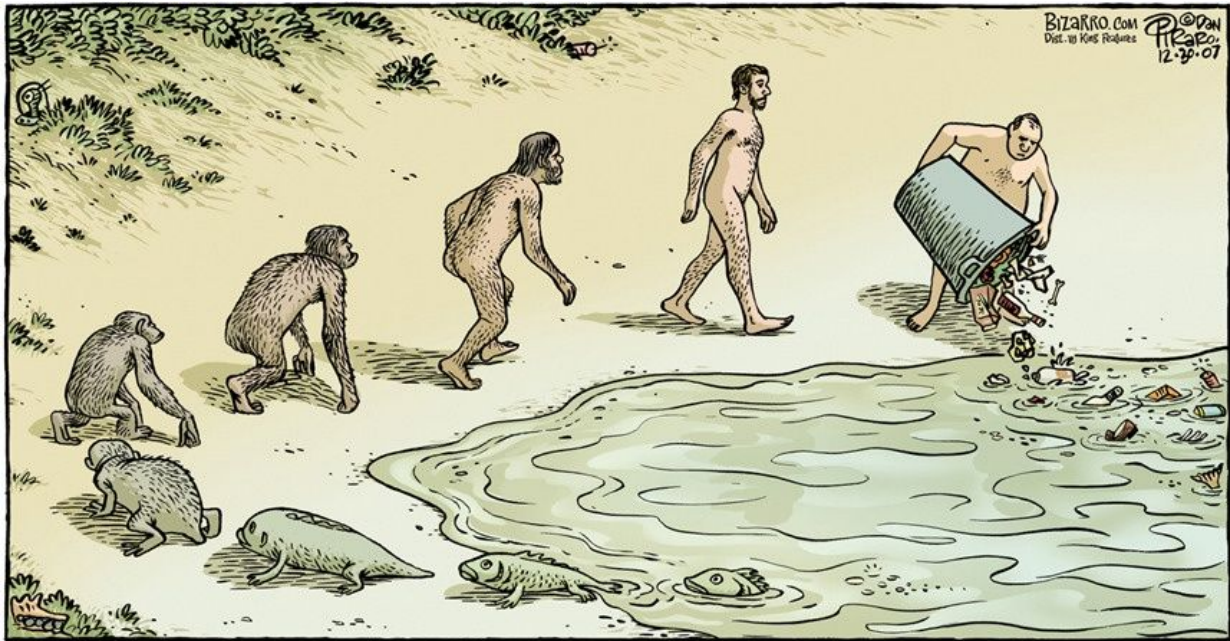
महल के बारे में उसका प्रभाव जानने के लिए उत्सुक था- वह सुंदर अंदरूनी कलाकृतियों उद्यान फूल और पुस्तकालय में रखी कुछ अद्भुत पांडुलिपियों के बारे में या वहाँ चहकते पक्षियों के बारे में उस का मत जानना चाहता था--- आदि आदि- लड़के के मन में झिझक थी और वह मानता है कि दीपक की देखभाल करने के लिए वह महल को उस दृष्टि से नहीं देख पाया बुद्धिमान आदमी उत्तर दिया- 'तो फिर तुम्हें जाना चाहिए और पूरे महल दोबारा देखना चाहिए- पूर्ण रूप से सभी चीजों को एक साथ देखना चाहिए और तुम्हें तेल का भी खयाल रखना होगा- तो लड़के ने एक बार फिर से महल को देखा अपने दिल के साथ उन सब चीजों की सराहना की जिन्होंने उस को दिल से प्रभावित किया और साथ ही उसने अपने शरीर की गतिविधियों पर भी ध्यान केंद्रित किया और तेल को गिरने नहीं दिया. लड़के ने शरीर का संतुलन रखने और मन की शांति बनाए रखने की बेचैन आशंका के अदभुत संश्लेषण में ज्ञान पाया-

---एक अच्छी मननशील किताब पढ़ते समय या हमारे जीवन की सुखभरी और तनावग्रस्त स्थितियों का सामना करते समय उपरोक्त बात ध्यान में रखने की जरूरत है- हमारा जीवन सुख और तनाव का एक अजब मिश्रण है- ये दोनों स्थितियां विचार की स्वाभाविक प्रगति के दौरान अपनी भूमिका निभाती हैं- आउटडोर में और पूरी तरह से शांत मन के बिना एक किताब पढ़ना एक जल्दबाजी भरे विचार को बढ़ावा देगा- तनाव या ध्यानशील स्थिति के दौरान उत्पन्न हुए विचार एक नहीं हो सकते- लेकिन तनावग्रस्त मन के रहते मननशील मन बनाने के लिए हमें अति जागरूक मन की जरूरत है ताकि तनावपूर्ण मन हमारे विचारशील ध्यान में हस्तक्षेप न करे-

From: ABC of Inner World (Hindi translation by author)

श्री अरविंद ने कहा है कि जब मैं जागा तब मुझे पता चला कि अब तक मैं सोया ही हुआ था; और जब मैंने वास्तविक जीवन जाना तब मुझे पता चला कि जिसे मैं जीवन समझता था वह तो मृत्यु थी। लेकिन स्वाभाविक है कि जिसे हम नहीं जानते उसका हमें कोई खयाल भी नहीं हो सकता; और उससे हम कोई तुलना भी नहीं कर सकते। इसे जाग्रत कहते हैं तीन अवस्थाओं से हम परिचित हैं--स्वप्न, सुषुप्ति, जाग्रत। इन तीनों में यही अवस्था जाग्रत कही जा सकती है। जिस दिन हम चौथी से परिचित होते हैं उस दिन ये तीनों अवस्थाएं निद्रा की अवस्थाएं हो जाती हैं; उस दिन फिर हमें दूसरे ढंग से कहना पड़ता है--उस दिन हमें कहना पड़ता है : गहरी सुषुप्ति, कम गहरी सुषुप्ति, और कम गहरी सुषुप्ति। जिसे अभी हम जाग्रत कहते हैं वह सबसे कम गहरी सुषुप्ति है; जिसे हम स्वप्न कहते हैं वह और गहरी सुषुप्ति; और जिसे हम सुषुप्ति कहते हैं वह पूरी गहरी सुषुप्ति। ये तीनों नींद की ही अवस्थाएं हैं, लेकिन अभी इसे हम जाग्रत कहेंगे। --- (ओशो)

जीव की विकास यात्रा



जो उष्ण छिछले सागर के अंदर छोटे से कंपन से लेकर जीव की विकास यात्रा मानव तक आई, वह विकास शारीरिक संरचना और मस्तिष्क में ही नहीं, किंतु प्रवृत्ति, मन तथा भावों के निर्माण में भी हुआ।

जिस प्रकार का विकास कीटों में हुआ वह अन्यत्र नहीं दिखता। मक्खी की एक आँख में लगभग एक लाख आँखें होती हैं। इन दो लाख आँखों से वह चारों ओर देख सकती है।

एक कीड़ा अपने से हजार गुना बोझ उठा सकता है। अपनी ऊँचाई-लंबाई से सैकड़ों गुना ऊँचा या दूर कूद सकता है। कैसी अंगों की श्रेष्ठता, कितनी कार्यक्षमता! फिर प्रकृति ने एक और प्रयोग किया कि कीटवंश, उनका समूह एक स्वचालित इकाई की भाँति कार्य करे। सामूहिकता में शायद सृष्टि का परमोद्देश्य पूरा हो।

कीटों के अंदर रची हुई एक मूल अंतःप्रवृत्ति है, जिसके वशीभूत हो वे कार्य करते हैं। इसके कारण लाखों जीव एक साथ, शायद बिना भाव के (?) रह सके। कीटवंशों की बस्तियाँ बनीं। उनका सामूहिक जीवन सर्वस्व बन गया और कीट की विशेषता छोड़ वैयक्तिक गुणों का हास हुआ। इससे मूल जैविक प्रेरणा समाप्त हो गई।

कीट आज भी हमारे बीच विद्यमान हैं। पर पचास करोड़ वर्षों से इनका विकास रूक गया।

रीढ़धारी जंतुओं में मछली, उभयचर, सरीसप, पक्षी एवं स्तनपायी हैं। पहले चार अंडज हैं, पर स्तनपायी पिंडज हैं। प्रथम तीन साधारणतया एक ही बार में हजारों अंडे देते हैं, एक अटल, अंधी, अचेतन प्रवृत्ति के वश होकर। पर माँ जानती नहीं कि अंडे कहाँ दिए हैं और कभी-कभी वह अपने ही अंडे खा जाती है।

लगभग सात करोड़ वर्ष पूर्व प्रकृति ने जो नया प्रयोग किया कि संघर्षमय संसार में शायद शक्तिशाली जीव अधिक टिकेगा, इसलिए विशालकाय दाँत-नख तथा जिरहबखतरयुक्त दानवासुर बनाए। वे भी नष्ट हो गए।

तब चराचर सृष्टि में एक नया आयाम खुला। क्रांतिकारी परिवर्तन करने वाला एक अद्वितीय तत्त्व उत्पन्न हुआ। पक्षी और स्तनपायी में एक नए भाव का निर्माण हुआ। पक्षी घोंसला बनाते हैं। अंडों को सेते समय उनकी रक्षा करते

हैं। बच्चा पैदा होने पर कितना असहाय होता है। और मनुष्य का बच्चा तो सबसे बड़े कालखंड के लिए निर्बल रहता है।

मां-बाप उसे खाना देते हैं, जीना सिखाते हैं। कितनी चिंता करके बच्चे का पालते हैं। पक्षी ने दाना छोड़ तिनका उठाया-घोंसला बनाने के लिए। घूमना छोड़ अंडा सेया, स्वयं न खाकर बच्चे को दिया, यह समझकर कि बच्चा वह स्वयं है। यह बच्चे से अभिन्नता का भाव स्नेह, ममता और उससे जनित अपूर्व त्याग सिखाता है।

स्नेह, इससे अनेक गुण उत्पन्न होते हैं। शिक्षा की प्रथम कड़ी इसी से जुड़ती है। पालतू तोता, मैना मनुष्य की वाणी की नकल करना तभी सीखते हैं जब वे उससे प्रेम करने लगते हैं। पालतू कुत्ता भी घर के बच्चों को अपने गोल का समझता है। 'जन्म से स्वतंत्र' (born free) ऐसी शेरनी की पालनकर्ता मनुष्य के प्रति स्नेह की कहानी है।

शिशुक (सूँस: dolphin) के द्वारा मनुष्य को सागर से किनारे फेंककर उसकी जान बचाने की अनेक कथाएँ हैं। ऐसा है स्तनपायी जीव का नैसर्गिक स्नेह, जो सागर को लाट गया। शायद इसे देखकर ही जलपरी (mermaid) की कहानियाँ हैं।

कैसे मनुष्य के साथ खेलती, संगीत सुनती हैं। माँ की ममता से कुटुंब बना। स्नेह करने से सुख होता है, इससे सामाजिकता आई। गोल या दल बना। यह समाज-निर्माण की प्रक्रिया है। केवल सुरक्षा के लिए समाज नहीं बनता, सामाजिकता के भाव के कारण समाज जुड़े।

ये मछलियाँ, उभयचर तथा सरीसृप अनुभवों से सीखते हैं। उनकी कम-अधिक स्मृति भी रहती है। ऊपरी तौर पर उनके अनुभव प्राणी तक ही सीमित रहते हैं और उनकी मृत्यु पर खो जाते हैं। पर पक्षी एवं स्तनपायी अपने अनुभव कुछ सीमा तक अगली पीढ़ी को दे जाते हैं। ये पीढ़ी-दर-पीढ़ी संचित होते रहते हैं। इनके साथ भाव संलग्न हो जाते हैं। इस विकास-क्रम के पीछे कोई प्रयोजन है क्या? प्रकृति का कौन सा गूढ़ महोद्देश्य इसके पीछे है? यहाँ दो मत हैं।

हमने बर्नार्ड शॉ (Bernard Shaw) का नाटक 'पुनः मेथुसला की ओर' (Back to Methuselah) और उसकी भूमिका पढ़ी होगी। कैसे एक जीवन शक्ति (élan vital) विकास-क्रम को आगे बढ़ाती है।

एक पुरातत्वज्ञ एरिक वान दानिकन की पुस्तक 'देवताओं के रथ' (Erich von Daniken: Chariots of the Gods? Unsolved Mysteries of the Past) का प्रश्न है, क्या अंतरिक्ष के किसी दूसरे ग्रह के प्रबुद्ध जीव या देवताओं ने इस विकास-धारा को दिशा दी? इस पुस्तक में महाभारत की कुंती की कथा का उल्लेख है, जब उसने देवताओं का आह्वान कर तेजस्वी पुत्र मांगे।

जिस प्रकार बच्चे के अंग-प्रत्यंग उसके माता-पिता तथा उनके पीढ़ियों पुराने पूर्वजों पर निर्भर करते हैं उसी प्रकार वह उनके मनोभावों से प्रभावित संभावनाओं (potentialities) को लेकर पैदा होता है।

कर्मवाद का आधार यही है कि हमारा आचरण आने वाले वंशानुवंश को प्रभावित करता है। अत्यंत प्राचीन काल में भारतीय दर्शन में कर्मवाद के आधार पर जिस सोद्देश्य विकास की बात कही गई, उसके बारे में जीव विज्ञान अभी दुविधा में है।

आज के वैज्ञानिक विकास को आकस्मिक एवं निष्प्रयोजन समझते हैं, मानों यह संयोगवश चल रहा हो। जैसे कोई एक अंध प्रेरणा अललटपू हर दिशा में दौड़ती हो और अवरोध आने पर उधर जाना बंद कर नई अनजानी जगह से किसी दूसरी दिशा में फूट निकलती हो। --गजानन येरावर (<https://adhyatmikh.blogspot.in/> से साभार)

चलिये शाश्वत गंगा की खोज करें (धारावाहिक चिंतन)



पूर्व कथा:

व्यथित गंगा ज्ञानि से संबोधित है. हमारा काव्य नायक "ज्ञानी" गंगा से संवाद रत है. गंगा की व्यथा ने ज्ञानि के हृदय को झजकोर दिया है. गंगा उसे बताती है मनुष्य की तमाम विसंगतियों, मुसीबतों, परेशानियों का कारण उस का ओछा ज्ञान है जिसे वह अपनी तरक्की का प्रयाय मान रहा है.

इस ज्ञान ने उसे प्रकृति से दूर कर दिया है. वह प्रकृति को अपना लक्ष्य नहीं लक्ष्य का साधन मानता है. इसी ओछे ज्ञान से मानव को निकालना और सही व ज्ञानोचित अनुभूति का संप्रेषण करना अब ज्ञानि का लक्ष्य है.

गंगा ने उसे अपने पास बिठा लिया है. दोनों मानव मल से धुंधले पानी के पास बैठ हज़ारों वर्ष पुरानी मानव संस्कृति के पतन उत्थान की कथा व्यथा कह रहे हैं.

ज्ञानी ने गंगा के साथ हुए अपने वार्तालाप को अपने प्रवचनों में संजो लिया है. वे प्रवचन आप पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हैं....

(३) ज्ञानी का तीसरा प्रवचन:

गंगा क्षुब्ध है. सब कुछ उलट पुलट हो गया. वह कभी नहीं चाहती थी के मानव के प्रगति रथ के ऊपर सवार हो. वह प्रकृति की चहेती. वह स्वर्ग की देवी. वह बादलों में बसने वाली. वह हवाओं में उड़ने वाली कैसे धरती की एक अधम निवासी बन गई. मानव रथ ने उसे बंधक बन लिया. अपनी मर्जी से उस का रास्ता निर्धारित कर लिया. मानव चाहे वह बहे. मानव चाहे वह बांध में बांध जाये. उस के पानी .. प्राणि को जीवन दान न दें बल्कि उनका जीवन छीन लें. यूँ मानव को वह अपनी संतान ही

समझती रही. उस की प्रगति से विचलित नहीं हुई कभी. लेकिन यह क्या? अपनी प्रगति के नशे में चूर वह अपनी जननी को भी भूल गया. जननी से धोखा करने लगा. गंगा को स्मरण होता है वह समय जब भारत के पौराणिक राजवंशों में सबसे प्रसिद्ध इक्ष्वाकु कुल थी। इस कुल की अट्ठाईसवीं पीढ़ी में राजा हरिश्चंद्र हुए, जिन्होंने सत्य की रक्षा के लिए सब कुछ दे दिया। इसी कुल की छत्तीसवीं पीढ़ी में सगर नामक राजा हुए। 'गर' (विष) के साथ पैदा होने के कारण वह 'सगर' कहलाए।

सगर चक्रवर्ती सम्राट बने। अपने गुरुदेव औरव की आज्ञा मानकर उन्होंने तालजंघ, यवन, शक, हैडय और बर्बर जाति के लोगों का वध न कर उन्हें विरूप बना दिया। कुछ के सिर मुँड़वा दिए, कुछ की मूँछ या दाढ़ी रखवा दी। कुछ को खुले बालों वाला रखा तो कुछ का आधा सिर मुँड़वा दिया। किसी को वस्त्र ओढ़ने की अनुमति दी, पहनने की नहीं और कुछ को केवल लँगोटी पहनने को कहा।

संसार के अनेक देशों में इस प्रकार के प्राचीन काल में रिवाज थे। इनकी झलक कहीं-कहीं आज भी दिखती है। भारतीय पौराणिक इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण कथा गंगावतरण, जिसके द्वारा भारत की धरती पवित्र हुई, इन राजा सगर से संबंधित है। गंगा-यमुना संगम, प्रयाग।

उनके राज्य में एक बार बारह वर्ष तक अकाल पड़ा। भयंकर सूखा और गरमी के कारण हाहाकार मच गया। तब राजा सगर से यज्ञ करने को कहा गया एक उद्देश्य से एकजुट होना ही यज्ञ है। राजा सगर ने सौर्वे यज्ञ का घोड़ा छोड़ा। वह एक स्थान पर एकाएक लुप्त हो गया। जब हताश हो लोग राजा के पास आए तो उसने उसी स्थान के पास खोदने की आज्ञा दी। प्रजाजनों ने वहाँ खोदना प्रारंभ किया।

पर न कहीं अश्व मिला, न जल निकला। खोदते हुए वे पूर्व दिशा में कपिल मुनि के आश्रम में पहुँचे। कपिल मुनि सांख्य दर्शन के प्रणेता और भगवान् के अंशावतार माने गए हैं। ऐसा उनके दर्शन का माहात्म्य है।

उन्हीं के आश्रम में कपिला गाय कामधेनु थी, जो मनचाही वस्तु प्रदान कर सकती थी। वहीं पर वह यज्ञ का अश्व बाँधा दिखा। तब लोग बिना सोचे-समझे कि किसने बाँधा, कपिल मुनि को 'चोर' आदि शब्दों से संबोधित कर तिरस्कृत करने लगे। मुनि की समाधि भंग हो गई और लोग उनकी दृष्टि से भस्म हो गए।

राजा सगर की आज्ञा से उनका पौत्र अंशुमान घोड़ा ढूँढ़ने निकला और खोजते हुए प्रदेश के किनारे चलकर कपिल मुनि के आश्रम में साठ हजार प्रजाजनों की भस्म के पास घोड़े को देखा। अंशुमान

की स्तुति से कपिल मुनि ने वह यज्ञ-पशु उसे दे दिया, जिससे सगर के यज्ञ की शेष क्रिया पूर्ण हुई। कपिल मुनि ने कहा,

‘स्वर्ग की गंगा यहाँ आएगी तब भस्म हुए साठ हजार लोग तरंगेंगे।’

तब अंशुमान ने स्वर्ग की गंगा को भरतभूमि में लाने की कामना से घोर तपस्या की। उनका और उनके पुत्र दिलीप का संपूर्ण जीवन इसमें लग गया, पर सफलता न मिली। तब दिलीप के पुत्र भगीरथ ने यह बीड़ा उठाया।

यह हिमालय पर्वत (कैलास) शिव का निवास है, और मानो शिव का फैला जटाजूट उसकी पर्वत-श्रेणियाँ हैं। त्रिविष्टप (आधुनिक तिब्बत) को उस समय स्वर्ग, अपवर्ग आदि नामों से पुकारते थे। उनके बीच है मानसरोवर झील, जिसकी यात्रा महाभारत काल में पांडवों ने सशरीर स्वर्गारोहण के लिए की।

इस झील से प्रत्यक्ष तीन नदियाँ निकलती हैं। ब्रह्मपुत्र पूर्व की ओर बहती है, सिंधु उत्तर-पश्चिम और सतलुज (शतद्रु) दक्षिण-पश्चिम की ओर। यह स्वर्ग का जल उत्तराखंड की प्यासी धरती को देना अभियंत्रण (इंजीनियरी) का अभूतपूर्व कमाल होना था। इसके लिए पूर्व की अलकनंदा की घाटी अपर्याप्त थी।

यह साहसिक कार्य अंशुमान के पौत्र भगीरथ के समय में पूर्ण हुआ, जब हिमालय के गर्भ से होता हुआ मानसरोवर का जल गोमुख से फूट निकला।

गंगोत्री के प्रपात द्वारा भागीरथी एक गहरे खड्ड में बहती है, जिसके दोनों ओर सीधी दीवार सरीखी चट्टानें खड़ी हैं।

गंगा का वेग शिव सरीखे हिमालय और पेड़ पौधों वनस्पति की जटाजूट ने सँभाला। गंगा उसमें खो गई, उसका प्रवाह कम हो गया। जब वहाँ से समतल भूमि पर निकली तो भगीरथ आगे-आगे चले। गंगा उनके दिखाए मार्ग से उनके पीछे चलीं। आज भी गंगा को प्रयाग तक देखो तो उसके तट पर कई बड़े कगार न मिलेंगे। मानो यह मनुष्य निर्मित है।

ऐसा उसका मार्ग यम की पुत्री यमुना की नील, गहरे कगारों के बीच बहती धारा से वैषम्य उपस्थित करता है। प्रयाग में यमुना से मिलकर गंगा की धारा अंत में गंगासागर (महोदधि) में मिल गई। राजा सगर का स्वप्न साकार हुआ। उनके द्वारा खुदवाया गया ‘सागर’ भर गया और उत्तरी भारत में पुनः खुशहाली आई। आज का भारत गंगा की देन है।

पूर्वजों द्वारा लाई गई यह नदी पावन है। इसे 'गंगा मैया' कहकर पुकारा जाता है। इसके जल को बहुत दिनों तक रखने के बाद भी उसमें कीड़े नहीं पड़ते। संभवतया हिमालय के गर्भ, जहाँ से होकर गंगा का जल आता है, की रेडियो-धर्मिता के कारण ऐसा होता है।

प्राचीन काल में, इसकी धारा अपवित्र न हो, इसका बड़ा ध्यान रखा जाता था। बढ़ती जनसंख्या और अनास्था के कारण इसमें कमी आई होगी। पर गंगा की धारा भारतीय संस्कृति की प्रतीक बनी।

शब्द आदि स्थूल विषय न होने पर भी जाग्रत अवस्था की शेष रह गई वासना के कारण मन इंद्रियों द्वारा शब्द आदि वासनामय विषयों को ग्रहण करता है, उस अवस्था को स्वप्न अवस्था कहते हैं। "

कभी-कभी बहुत हैरानी होती है। कहते तो हैं हम कि जगत अब एक बड़ा गांव भर हो गया है। मार्शल मैक्लुहान कहता है : ए ग्लोबल विलेज; यह सारी जमीन एक बड़ा गांव हो गई है। लेकिन यह बात बहुत गहरी नहीं मालूम पड़ती। हम करीब मालूम पड़ते हैं, क्योंकि यात्रा के साधन बढ़ गए हैं, लेकिन फिर भी चेतना अभी भी बहुत करीब एक- दूसरे के मालूम नहीं पड़ती।

इस उपनिषद् ने हजारों साल पहले यह स्वप्न की व्याख्या की है, और पश्चिम अभी इन पचास सालों में इस व्याख्या को पूरा नहीं कर पा रहा है, अभी टटोल रहा है। हैरानी होती है यह बात जान कर कि मनुष्य की सभ्यताएं खोज लेती हैं किन्हीं बातों को, तो भी वे बातें स्थानिक और लोकल रह जाती हैं—सारी मनुष्य-चेतना तक नहीं फैल पातीं।

यह उपनिषद् हजारों साल पहले कहता है कि हम उसे स्वप्न कहते हैं—इंद्रियां बंद हो गईं, आंखें बंद हैं, फिर भी दृश्य देखे जा सकते हैं। सो गए, कान शिथिल पड़ गए, बाहर की ध्वनि सुनाई नहीं पड़ती, फिर भी भीतर ध्वनियां सुनी जा सकती हैं। हाथ निढाल पड़े हैं मुर्दे की तरह, हाथ कुछ भी नहीं छूते, भीतर अब भी स्पर्श जाना जा सकता है।

तो ऋषि कहता है. 'जाग्रत में जो वासनाएं अपूर्ण रह गईं, पूरी नहीं हो पाईं, जाग्रत में जो अधूरा छूट गया, स्वप्न उसे पूरा कर लेता है।'

तो स्वप्न जो है वह जाग्रत की पूर्ति है—सप्लीमेंट।

स्वप्न और जाग्रत में एक फर्क हुआ. जाग्रत में वस्तु बाहर होती है, रूप भीतर होता है, स्वप्न में वस्तु बाहर नहीं होती,लेकिन रूप भीतर होता है। तो स्वप्न शुद्ध आकार है, कोई वस्तु नहीं है वहां।

(ओशो)

क्या है चेतना द्वारा निर्देशित "इनर पीस" ? -स्वर्ण ओमकार



आज जब अपने रूम में बैठा था तो मेरे एक स्टूडेंट ने कमरे में आने की आज्ञा ली और मेरे पास आ कर अभिवादन किया. वह पिछले सेशन में हम से पढ़ चुका था और अगले वर्ष (समेस्टर) की पढ़ाई कर रहा था. जब मैंने उस के आने का प्रयोजन पूछा तो उस ने कहा- "मैं आप से इनर पीस के बारे कुछ पूछना चाहता हूँ". मैंने उसे चेयर पर बैठने का इशारा किया.

उस ने बात आगे बढ़ाते हुए कहा-

"मैं आप का फेसबुक फ्रेंड भी हूँ और आप के आर्टिकल पढ़ता रहता हूँ"

मैंने हँसते हुए मैत्री भाव से उसे आराम से बैठने को कहा और अपना काम करते करते जो मैं उस के आने से पहले कर रहा था - उस से पूछा.

"पहले तुम बताओ तुम इनर पीस के बारे क्या जानते हो. तुम्हारा अपना तजुर्बा क्या कहता है." मुझे लगा कि वह अनायास नहीं मेरे पास आया. उसे ज़रूर दिलचस्पी है इस टॉपिक में.

"जैसे सर, जब हम इनर पीस में हों तो हम में दूसरों के प्रति प्यार की empathy की feelings ज्यादा होती हैं. और हम में क्रोध द्वेष इत्यादि भी काम रहता है".

मैंने उसे पूछा के उस ने कोई राइटर वगैरा पढ़े हैं? मुझे इस के बारे उस का जवाब नेगेटिव ही मिला.

हाँ उस ने एक बात ज़रूर शेयर की के उस ने "किसी केमिकल" का अपने उप्र प्रभाव देखा है और उसने बहुत ज्यादा इनर पीस को और एक आनंद दायक अवस्था को एन्जॉय किया है. उस का यह भी कहना था के उसे पता है के केमिकल का प्रभाव अस्थाई है और वह एक स्थाई इनर पीस की बात करने आया है.

हमारी बात एक लम्बी डिस्कशन में तब्दील हो गई. संक्षिप्त में मैंने उसे बताया कि- "एक रिएक्शन टाइम होता है जो हर एक शख्स में अलग अलग होता है. किसी बात को respond करने में हम कितना समय लेते हैं साइकोलॉजी में उसे "रिएक्शन टाइम" कहा जाता है. जब हम किसी बात (टॉक) को respond करते हैं तो रिएक्शन टाइम और होता है और जब हम किसी एक्शन को respond करते हैं तो और. बात चीत करते समय हम अपने "नुक्सान फायदे" का लगातार जायजा लेते रहते हैं और उसी मुताबिक सच झूठ से बात करते रहते हैं, और रिएक्शन टाइम कम ज्यादा होता जाता है

सुबह के समय जब हम फ्रेश होते हैं तो हम ज्यादा क्रिएटिविटी से respond करते हैं और रिएक्शन टाइम कम ज्यादा हो सकता है. लेकिन शाम आने तक हमारी रिएक्शन स्टीरियोटाइप घिसी पिटी होती जाती है. और हो सकता है हम बात को जल्द समाप्त करने कि इरादे से रिएक्शन टाइम भी कम कर दें.

फिर मैंने उसे एक उदाहरण दी कि मान लीजिए हमारी बात चीत किसी "ड्रिंक" पर (over some drink) हो रही हो तो हमारा रिएक्शन टाइम अलग होगा. हमारी बात और क्रिएटिव हो जाएगी. धीरे धीरे हमारे बीच सोचने की कम से कम दूरी हो जाएगी और अजनबीपन अपनेपन में तब्दील हो जायेगा.

यह सब इस लिए होगा के हम धीरे धीरे अपनी "ईगो" और थिंकिंग ब्रेन को पीछे छोड़ते जायेंगे और अपनी आत्मा कांशसनेस या चेतना के ज्यादा पास हो जायेंगे. हमारे स्टीरियोटाइप झूठ कम होते जायेंगे और सत्य के और पास हो जायेंगे.

ऐसे ही एक "संत" की स्थिति होती है. जो सही मायने में संत हो. वह अपने थिंकिंग ब्रेन व ईगो से कम काम लेता है. उस की हर रिस्पांस स्पॉन्टेनियस (सहज भाव से) होती है. वह एक प्रेज्यूडिस भावना से रियेक्ट नहीं करता. वह सहज भाव से रेस्पोंड करता है. उस की बातों में सच्चाई कायम रहती है चाहे उसे कोई नुक्सान ही क्यों न हो रहा हो.

ऐसा इस लिए होता है के अपनी बात चीत व रेस्पोंसेस से वह अपनी अंतरात्मा से रिएक्शन देता है. और यही उस की इनर पीस की निशानी है.

यही वह स्थिति है हम जिस की भाल में है. हमारे पास है लेकिन हम अपनी घिसी पिटी रेस्पोंसेस से उसे corrupt कर चुके हैं.

मृत्यु के बाद चेतना का क्या होगा?



क्या मौत के बाद क्या चेतना अस्तित्व में रहती हैं या शरीर के साथ ख़तम हो जाती है
मृत्यु के बाद क्या बचता है? - मरने वाले मनुष्य का ज्ञान बीजरूप में स्थित हो जाता है.
इन्सान के ज्ञान की यह बीजरूप "गुठली" कहाँ है यहाँ से इन्सान पुनः स्वयं का पुनर्सृजन करता है. ऐसे प्रश्न को कई तरह से हल करने की कोशिश की जा सकती है..

इन्सान के अस्तित्व के तीन चार नाम है, मन, आत्मा, सोल, अहम्, Psyche nous इत्यादि.

शास्त्र कहते हैं - इन्सान के भीतर कई तहें (लेयर्स) हैं जिनमें इन्सान की गुठली छिपी हुई है:

भौतिक शरीर (अन्नमय कोष)

मानसिक शरीर (मनोमय कोष)

नर्वस लेयर (प्राणमय कोष)

नॉलेज बॉडी -शरीर (ज्ञानमय कोष)

अंतिम (लगपग) लेयर जिस के भीतर है

स्परिचुअल बॉडी (आनंदमय कोष)

भौतिक शरीर या स्थूल शरीर को सभी देख सकते हैं. शेष तहें दिखाई नहीं देती

पर ये इतनी स्पष्ट ज़ाहिर नुमायां व साक्षात् हैं कि थोड़ी सी सेल्फ ऑब्जरवेशन से आप इन की पहचान कर सकते हैं.

अब मानसिक लेयर आप की ख्वाहिशों, मुसीबतों, परेशानियों, रोज़ के क्रिया कलापों का हजूम है

आप आसानी से अपने मन को ऑब्जर्व कर सकते हैं..

नर्वस बॉडी आप में शरीर स्पंदन, सेंसशंस, लहरें, झनझनाहट, इत्यादि के संकेत से पहचानी जाती है.

जब भी आप इमोशनल होते हैं तो उन इमोशंस का स्पंदन आप कि नर्वस बॉडी या प्राणमय कोष पर होता है.

केवल इन्सान ने अपने अंदर एक अलग बॉडी तैयार कि हुई है शेष जीवों ने नहीं वह है नॉलेज बॉडी या ज्ञानमय कोष. अब भीतर कि यात्रा पर निकले हैं तो आप इधर उधर से लिए ज्ञानसे प्रभावित होते रहते हैं.

आप शर्दों अर्थों द्वारा किसी वस्तु को जानते हैं. अब आत्मा गर कोई वस्तु (ऑब्जेक्ट) है तो आप का नॉलेज उसे सीधे जानने की बजाये शब्दों अर्थों व समझ द्वारा जानने कि कोशिश करता है इस लिए इन्सान के लिए इस नॉलेज लेयर को तोड़ कर आगे जाना बहुत ही कठिन है इस स्टेज पर आ कर उस का सारा ध्यान ज्ञान की और चला जाता है और वह उस अंतिम लेयर के पास नहीं जा सकता

अब येह सारी लेयर्स जगह बदलती रहती हैं. जैसा कोई आदमी है जैसा उस ने अपनी लाइफ को डायरेक्शन दे रखी है वैसी लेयर उस के उप्पर नीचे होती रहती है

कोई अपने मन से आगे नहीं जा सकता और कोई अपने ज्ञान से

वेद, वेदान्त भगवद्गीता आदि ग्रन्थ शास्त्रों में ज्ञान शब्द अनेक बार आया है, यह ज्ञान शब्द का दो अर्थों में प्रयुक्त हुआ है सामान्य रूप में प्रचलित ज्ञान जिसका अर्थ है किसी को या कुछ अज्ञात है, जो जानकारी, तथ्य, विवरण, अनुभव या शिक्षा के माध्यम अथवा कौशल से शामिल करते हैं, के साथ एक सुपरिचय है.

दूसरा ज्ञान शब्द का प्रयोग महाबुद्धि अथवा परमबुद्धि के लिए हुआ है. दूसरे शब्दों में इसे पूर्णता (perfection) कहा जाता है. सरल रूप से समझने के लिए इसे absolute knowledge+wisdom +intelligence कह सकते हैं. यही आत्मतत्त्व है, हमारी अस्मिता है.

अब कुछ प्रश्न हैं-

यदि चेतना ही सर्वोपरि है तो अचेतन क्या है? प्रकृति तो पूर्ण है और चेतना आधा हिस्सा है, दूसरा चेतना के लिए शरीर आवश्यक है तभी वह महसूस होगी. वास्तव में यह क्रिया शक्ति का परिणाम है. जितनी क्रियाशक्ति उतना चेतना का विस्तार और प्रभाव. भगवद्गीता में इसे विकृति माना है अर्थात जो प्रकृति से उत्पन्न होती है. यहाँ प्रकृति का अर्थ **nature** नहीं है.

इसका अर्थ है ईश्वर का **nature**, इसे क्रिया शक्ति कहना उचित है. इस प्रकार स्पष्ट है कि क्रिया शक्ति अपने मूल स्तर पर चेतना है, प्रकृति है और किसी भी शरीर में विकृति रूप में फैली अनुभूत होती है. इसे प्राणी की जीवनक्रियाओं को चलानेवाला तत्व कहा जा सकता है। विज्ञान के अनुसार चेतना वह अनुभूति है जो मस्तिष्क में पहुँचनेवाले अभिगामी आवेगों (impulse) से उत्पन्न होती है।

एक मनुष्य नदी की ओर जा रहा है। यदि वह चलते-चलते नदी तक पहुँच जाता है और नदी में घुस जाता है तो वह डूबकर मर जाएगा। उसकी चेतना में फेला ज्ञान उसे बताता है उसके सामने नदी है और वह जमीन पर तो चल सकता है परंतु पानी पर नहीं चल सकता। मनुष्य की सभी क्रियाओं पर उपर्युक्त नियम लागू होता है. परन्तु हम यह मान लेते हैं कि उसकी चेतना ने उसे नदी में जाने से रोका जबकि वास्तविकता यह है कि वह अपरोक्ष रूप से ज्ञान द्वारा जो चेतना का कारण है और चेतना के माध्यम से प्रवाहित हो रहा है के द्वारा रोका गया.

वास्तव में चेतना ज्ञान के स्फुरण से उत्पन्न क्रिया शक्ति है. चूँकि ज्ञान सर्वत्र है इसलिए इस क्रिया शक्ति में भी ज्ञान है. इस कारण ही चेतना को माननेवाले भ्रमित हुए बैठे हैं.

अब इसे अद्वैत के माध्यम से समझें चेतना में दो तत्त्व हैं क्रिया शक्ति + ज्ञान. अतः चेतना मूल नहीं है. क्योंकि मूल एक है. और जब तक जीव सृष्टि है तभी तक चेतना का अस्तित्व है.

अब ज्ञान के विषय में चिन्तन करते हैं. इसकी अंतिम स्थिति पूर्ण और विशुद्ध है. यहाँ भी प्रश्न उपस्थित होता है.

यदि ज्ञान पूर्ण है तो अज्ञान क्या है. अज्ञान भी ज्ञान ही है. ज्ञान का बीज रूप में स्थित हो जाना अज्ञान है और शान्त और पूर्णावस्था में मूल रूप से स्थिति ज्ञान है.

यह सत् है क्योंकि यह सदा रहता है, यह असत् भी है अर्थात् यह संसार के रूप में प्रकट होता है और नष्ट होता भासित होता है. इसके प्रस्फुरण से क्रिया शक्ति जन्म लेती है जो चेतना का मूल है. मृत्यु के बाद क्या बचता है-

जब एक आदमी दुख-सुख से भरा हुआ मोहग्रस्त और खेदजनक अथवा सुखमय स्थितियों में मरता है तो क्या बचता है?

उस मरने वाले मनुष्य का ज्ञान बीज रूप में स्थित हो जाता है.

कर्मेन्द्रियाँ अपना कार्य बन्द कर देती हैं, उनका ज्ञान, जिसके द्वारा वह संचालित होती हैं, ज्ञानेन्द्रियों में स्थित हो जाता है। ज्ञानेन्द्रियाँ अपना ज्ञान छोड़ देती हैं और वह ज्ञान विषय वासनाओं एवं प्रकृति सहित पंचभूतों में स्थित हो जाता है। पंच भूत भी ज्ञान छोड़ देते हैं, वह गन्ध

में स्थित हो जाता है। गन्ध, रस में स्थित हो जाती है। रस, प्रभा में स्थित हो जाती है। प्रभा, स्पर्श में स्थित हो जाती है। स्पर्श, शब्द में स्थित हो जाता है। शब्द मन में, मन बुद्धि में, बुद्धि अहंकार में, स्थित हो जाती है। अहंकार अपरा (त्रिगुणात्मक) प्रकृति में स्थित हो जाता है। मन मन, बुद्धि, अहंकार, अपरा (त्रिगुणात्मक) प्रकृति केंद्र संचालित ज्ञान+क्रियाशक्ति है। ज्ञान+ क्रियाशक्ति की क्रियाशक्ति सुप्तवास्था में चली जाती है और वह जीव प्रकृति-ज्ञान सुप्त में के साथस्थित हो जाती है। अब केवल ज्ञान रह जाता है और ज्ञान, ज्ञान (पूर्ण विशुद्ध ज्ञान-अव्यक्त) में स्थित हो जाता है।

पुनः ज्ञान (अव्यक्त) से ही ज्ञान (जीव- ज्ञान +में) अपनी प्रकृति और कर्मों के साथ नवीन शरीर में बीज रूपसे स्थित होकर शरीर धारण करता है तथा पूर्व जन्म की प्रकृति और कर्मानुसार कर्मफल भोगता है और यहक्रम चलता रहता है। यह सत्य है कि बीज का नाश नहीं होता है। जीव अपनी प्रकृति के अनुसार प्रकृति कासंयोग कर शरीर का निर्माण करता है।

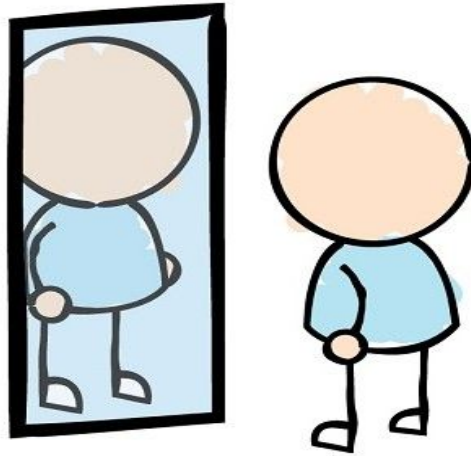
परन्तु आत्म स्थित योगी पुरुष जब देह त्याग करते हैं तो उनके संकल्प विकल्प समाप्त हो जाते हैं, उनकीविषय वासनाएं समाप्त हो जाती हैं। उनका में समाप्त हो जाता है। उनका ज्ञान पूर्ण और शुद्ध हो जाता है। वह ज्ञानेन्द्रियों से लेकर आत्मा तक परम शुद्ध अवस्था के कारण आत्म रूप में जब स्थित होता है तो परम शुद्ध होता है, उसमें विषय वासनार्यें, कर्म बन्धन नहीं होते। वह प्रकृति बन्धन से मुक्त हो जाता है। समाधिअवस्था में केवल पूर्ण एवं शुद्ध ज्ञान में, जिसमें कोई हलचल नहीं, तरंग नहीं, स्थित रहता है अथवा किसीसंकल्प के साथ बीज रूप में रहता है।

इसे अधिक सरल रूप में समझें। जीवन, ज्ञान और क्रिया शक्ति का खेल है। ज्ञान चार अवस्थाओं में रहता है। जाग्रत, स्वप्नवत, सुसुप्ति वत और चौथी मूल अवस्था में, जिसे शब्दों में बताया नहीं जा सकता। जीवितप्राणी में ज्ञान और क्रिया शक्ति दोनों की स्थिति है। यदि किसी प्राणी में क्रिया शक्ति की मात्रा 100% मान ली जाय तो 90% होने पर 10% क्षय तथा क्रिया शक्ति की मात्रा 5% होने पर 95% क्षय और 0% होने 100 % क्षय हो जाती है, जो मृत्यु कहलाती है। क्रिया शक्ति के क्षय होने पर ज्ञान यथावत रहता है केवल उसकोप्रसारित करने वाली ऊर्जा, क्रिया शक्ति समाप्त हो जाती है। अब जैसा ज्ञान वैसा अगला जीवन। अपनेअनुकूल परिस्थिति मिलने पुनः क्रिया शक्ति ज्ञान का संयोग करती है और वह ज्ञान जिसे जीव कहा है नएजीवन का, नए शरीर का सृजन करता है।

जे कृष्णमूर्ती लिखते हैं, मेरी चेतना ही सारी मानवजाति की चेतना है. मैं समझता हूँ यहाँ चेतना के स्थानपर आत्मा अथवा ज्ञान शब्द उपयुक्त होता. क्योंकि चेतना मूल न होकर परिणाम है. यद्यपि अन्त में मूल और परिणाम दोनों एक ही हो जाते हैं.

चेतना को चेतन करना क्या है?

-स्वर्ण ओमकार



चेतना हमारी जागृत अवस्था है.

यूँ चेतना को ऑब्जेक्टिफाई करना हमारी सब से बड़ी गलती है जिसे हम सदियों से करते आ रहे हैं. इस बात को कुछ इस तरह समझें. जब मैं चेतना को ऑब्जेक्टिफाई करता हूँ या ऐसे बयान करने के लिए दूर हो कर देखता हूँ तो या मैं कहता हूँ की चेतना यह है या वह है. तो पहले मुझे यह ज्ञान होना चाहिए की मैं ऐसा कर नहीं सकता. जब मैं चेतना से परे चेतना को देखूंगा तो चेतना तो मेरे साथ ही उस दूरी पर भी आ गई. क्या मैं बिना चेतना के चेतना को देख सकता हूँ. क्या चेतना दो जगह हो सकती है. चेतना को चेतन करने के लिए दूसरी चेतना, फिर उस को चेतन करने के लिए एक और चेतना, फिर उसको फिर उसको - अइ इन्फिनिटम- एक अंतहीन प्रक्रिया. क्या ऐसा हो सकता है. फिलॉसफर कहते हैं कि नहीं. फिलॉसफी में इसे "रयले'स रेग्रेस" (**Ryle's regress**) कहा जाता है. सार्त्र (**Sartre**) कहते हैं - चेतना का होना और उसे जानना दोनों एक ही समय पर घटित होने वाली प्रक्रियाएं हैं. जब हम सौदेश्य (**deliberately**) जान बुझ कर चेतना के विषय में सोचते हैं उसे बयान करते हैं उसे ऑब्जेक्टिफाई करते हैं तो यह चेतना का ही एक कर्म है. हम और चेतना कोई अलग अलग थोड़े हैं. यह जान लेना चाहिए. चेतना का होना और चेतना का जानना एक ही बात है.

चेतना के विषय में हर संत हर फिलॉसफर ने बात की है. क्या ये बातें हमें **DUALITY** या द्वैत में नहीं ले जाती? हम ने चेतना के साथ इसी तरह परमात्मा को भी **DUAL** (द्वैत) किया हुआ है. हम यह समझने लगे हैं परमात्मा भी चेतना की तरह कोई दूर की वस्तु या प्राणी या शक्ति है और जिस के पास हमें जाना

है. यह सदियों का सब से बड़ा मज़ाक है जो हमारे साथ हुआ है. अगर नाम पर ही जाएँ तो "परमात्मा" का अर्थ हुआ - परम+ आत्मा . यानि परम में. सो मैं सुपीरियर में हूँ. तो फिर इन्फीरियर में क्या हुआ. सिर्फ इतना की यह इन्फीरियर में "अनजान है की वह सुपीरियर में है."

चेतना को चेतन करना -कैसे? -स्वर्ण ओमकार

How to be conscious of consciousness?



(चेतना की शुद्ध व अशुद्ध झलक)

चेतना को उस की चेतन अवस्था में देखना एक गम्भीर प्रक्रिया है. यह अपनी आत्मा का स्व दर्शन है....

साधारणतः हम ऐसा नहीं करते जब तक हमें कहा न जाये. कभी माँ बाप या टीचर कहते हैं जब हमने कोई गलती की हो, "खुद की तरफ देख तुमने क्या किया है?" तब हम अंतरीव पडचोल करते हैं और बेहद शर्म महसूस करते हैं. तब हम चेतना की तरफ ही देख रहे होते हैं. यह एक बेहद साधारण कर्म है जो हम अक्सर करते हैं जब भी हमने कोई गलती की हो या फिर कोई बेहद अच्छा काम किया हो और प्रसन्नता महसूस कर रहे हों.

तब हम चेतना को चेतना की अवस्था में देख रहे होते हैं.

लेकिन ऊपर लिखित यह प्रक्रिया बेहद साधारण है जो हर मनुष्य करता है या कर सकता है.

सार्त्र इसे "अशुद्ध झलक" (Impure reflection) कहते हैं. या कांत (Emmanuel Kant) इसे अनुभवाश्रित मानसिक बोध (Empirical apperception) कहते हैं. अशुद्ध झलक में हम चेतना को उस की अवस्थाओं में देखते हैं, जैसे प्रसन्नता, उदासी, शर्म, निराशा कुंठा इत्यादि की अवस्था अब चेतना की शुद्ध झलक (Pure Reflection) क्या है?

चेतना को उस की प्राकृतिक अवस्था में देखना जब वह दुनियावी अप्राकृतिक अवस्थाओं (प्रसन्नता, उदासी, शर्म) से विकृत न हुई हो. चेतना की मूल, अमिश्रित, असली, खालिस, निर्मल, निष्कलंक अवस्था में देखना ही "शुद्ध झलक" है. कांत (Emmanuel Kant) इसे गूढ़, दुरूह, दुर्बोध, अतीन्द्रिय, अनुभवातीत या भावातीतबोध (Transcendental apperception) कहते हैं. क्या ऐसा हो सकता है. क्या मानव के बस में है यह शुद्ध झलक पाना. जी हाँ. यूँ यह बेहद गम्भीर प्रक्रिया है. लेकिन हम कर सकते हैं. और हो सकता है ऐसा करते भी रहे हों.

इस अवस्था की झलक दो तरह से हो सकती है

"समाधी अवस्था में" जब हम मन को इतना शांत कर लेते हैं कि मन चेतना में अपनी अप्राकृतिक अवस्थाओं (प्रसन्नता, उदासी, शर्म) मिश्रित नहीं करता.

"साक्षी भाव से" साक्षी, शहादत, साक्ष्य देना स्वयं को करम रहत मूक दर्शक बन लेने जैसा है. न्याय प्रक्रिया में साक्षी ने "जुर्म" को किया नहीं होता देखा होता है. जब हम स्वयं के साक्षी बनते हैं तो उसी तरह हम करम रहत हो जाते हैं. हम स्वयं को उच्च नज़र से देखते हैं. तब हम करम के लिए अनुभवहीण हो जाते हैं. हम करम कर भी रहे होते हैं लेकिन प्रशंसा दुःख शर्म इत्यादि अनुभव नहीं करते. अनुभव करने वाले स्वै से अलग हो जाते हैं. जैसे अगर किसी काम को हम प्रशंसा दुःख शर्म इत्यादि से अलग हो कर करें तो वह काम करते समय हम साक्षी भाव अपना लेते हैं और पक्के रूप में ओर कर्म के समय हम चेतना कि शुद्ध झलक देख रहे होते हैं. उस काम को हम आसक्त नहीं अनासक्त भाव से करते हैं.

भीतर है चैतन्य का वास, बाहर है विराट का विस्तार। इस विराट से संबंधित होने के दो उपाय हैं। यह जो बाहर फैला हुआ है और यह जो भीतर निवास कर रहा है, इन दोनों के मिलन की दो यात्राएं हैं। एक यात्रा है परोक्ष, इनडायरेक्ट; वह यात्रा होती है इन्द्रियों के द्वार से। एक यात्रा है प्रत्यक्ष, डायरेक्ट, इमिजिएट, माध्यमहीन; वह यात्रा होती है अतीन्द्रिय अवस्था से।

यदि बाहर जो जगत है उसे जानना है तो दो द्वार हैं, एक द्वार है कि मैं शरीर का उपयोग करूं और उसे जानूं और एक उपाय है कि मैं समस्त माध्यम छोड़ दूं और उसे जानूं।

साधारणतः बाहर प्रकाश है तो हम आंख के बिना नहीं जान सकते हैं; और बाहर ध्वनि है तो कान के बिना नहीं जान सकते हैं; और बाहर रंग हैं तो इन्द्रियों का उपयोग करना पड़े—इन्द्रियों से हम जानते हैं कि बाहर क्या है, इन्द्रियां हमारे ज्ञान के माध्यम हैं।

स्वभावतः इन्द्रियों से मिला हुआ यह शान वैसा ही है, जैसे कहीं कोई घटना घटे और कोई मुझे आकर खबर दे—मैं सीधा वहां मौजूद नहीं हूं कोई बीच में खबर लाने वाला संदेशवाहक है। निश्चित ही खबर मुझे वैसी ही नहीं मिलेगी जैसी घटी है, क्योंकि संदेशवाहक की व्याख्या भी सम्मिलित हो जाएगी।

जब मेरी आंख मुझे खबर देती है कि वृक्ष पर फूल खिला है—बहुत सुंदर, बहुत प्यारा; यह खबर मुझे मिलती है, यह वृक्ष के फूल के संबंध में तो है ही, यह आंख के रुझानों के संबंध में भी है, आंख ने अपनी व्याख्या भी जोड़ दी है। और वृक्ष पर

जा फूल खिला है, उसमें जारंग दिखाई पड़ रहा है, व वृक्ष के फूल में तो है ही, उन रंगों के संबंध में आंख ने भी बहुत कुछ जोड़ दिया है जो वृक्ष के फूल पर नहीं है।

चेतना की अवस्थाएं



देखना, सुनना, अनुभव करना, विचार करना, निर्णय करना आदि सभी कार्य चेतनाशक्ति के कारण होते हैं. चेतना के अभाव में यह जड़ शरीर कुछ भी नहीं कर सकता. यह चेतनशक्ति तीन अवस्थाओं में रहती है-जाग्रत, स्वप्नावस्था व सुषुप्ति. जाग्रत अवस्था में चेतनाशक्ति संसार का अनुभव करती है. श्रवण आदि ज्ञानेंद्रियां एवं शब्द आदि विषयों के द्वारा जो विशेष अनुभव होता है, उसे जाग्रत अवस्था कहते हैं.

इस जाग्रत अवस्था में मनुष्य को अपने शरीर का अभिमान रहता है कि मैं शरीर हूं, तो यह आत्मा ही विश्व कहलाती है अर्थात् यह इस स्थूल जगत से अन्य किसी तत्व का स्वीकार नहीं करती. स्वप्नावस्था में केवल मन सक्रिय रह कर विभिन्न विषयों का अनुभव मात्र करता है. उसमें क्रिया का अभाव रहता है.

जाग्रत अवस्था में जो देखा, सुना जाता है, उसकी सूक्ष्म वासना से निद्राकाल में जो जगत (व्यवहार) दिखाई देता है, वही स्वप्नावस्था है. इस अवस्था में सूक्ष्म शरीर का अभिमान होने से आत्मा 'तेजस' कहा जाता है. मैं कुछ नहीं जानता, सुख से निद्रा का अनुभव कर रहा हूं, यह सुषुप्ति अवस्था है.

इस समय कारण शरीर का अभिमान करने से आत्मा 'प्राज्ञ' कहा जाता है. जाग्रत अवस्था में ज्ञान इंद्रियों के माध्यम से होता है. स्वप्नावस्था में यह ज्ञान मन से होता है, जबकि सुषुप्तावस्था में मन भी सप्त हो जाता है, जिससे इसमें सांसारिक ज्ञान का अभाव हो जाता है.

-आदि शंकराचार्य

आत्मा की सात अवस्थाएं

जन्म और मृत्यु के बीच और फिर मृत्यु से जन्म के बीच तीन अवस्थाएं ऐसी हैं जो अनवरत और निरंतर चलती रहती हैं। वह तीन अवस्थाएं हैं : जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति।

यह क्रम इस प्रकार चलता है- जागा हुआ व्यक्ति जब पलंग पर सोता है तो पहले स्वप्निक अवस्था में चला जाता है फिर जब नींद गहरी होती है तो वह सुषुप्ति अवस्था में होता है। इसी के उल्टे क्रम में वह सवेरा होने पर पुनः जागृत हो जाता है। व्यक्ति एक ही समय में उक्त तीनों अवस्था में भी रहता है। कुछ लोग जागते हुए भी स्वप्न देख लेते हैं अर्थात् वे गहरी कल्पना में चले जाते हैं।

जो व्यक्ति उक्त तीनों अवस्था से बाहर निकलकर खुद का अस्तित्व कायम कर लेता है वही मोक्ष के, मुक्ति के और ईश्वर के सच्चे मार्ग पर है। उक्त तीन अवस्था से क्रमशः बाहर निकला जाता है। इसके लिए निरंतर ध्यान करते हुए साक्षी भाव में रहना पड़ता है तब हासिल होती है : तुरीय अवस्था, तुरीयातीत अवस्था, भगवत चेतना और ब्राह्मी चेतना।

1. जागृत अवस्था : अभी यह आलेख पढ़ रहे हो तो जागृत अवस्था में ही पढ़ रहे हो? ठीक-ठीक वर्तमान में रहना ही चेतना की जागृत अवस्था है लेकिन अधिकतर लोग ठीक-ठीक वर्तमान में भी नहीं रहते। जागते हुए कल्पना और विचार में खोए रहना ही तो स्वप्न की अवस्था है।

जब हम भविष्य की कोई योजना बना रहे होते हैं, तो वर्तमान में नहीं रहकर कल्पना-लोक में चले जाते हैं। कल्पना का यह लोक यथार्थ नहीं एक प्रकार का स्वप्न-लोक होता है। जब हम अतीत की किसी याद में खो जाते हैं, तो हम स्मृति-लोक में चले जाते हैं। यह भी एक-दूसरे प्रकार का स्वप्न-लोक ही है।

अधिकतर लोग स्वप्न लोक में जीकर ही मर जाते हैं, वे वर्तमान में अपने जीवन का सिर्फ 10 प्रतिशत ही जी पाते हैं, तो ठीक-ठीक वर्तमान में रहना ही चेतना की जागृत अवस्था है।

2. स्वप्न अवस्था : जागृति और निद्रा के बीच की अवस्था को स्वप्न अवस्था कहते हैं। निद्रा में डूब जाना अर्थात् सुषुप्ति अवस्था कहलाती है। स्वप्न में व्यक्ति थोड़ा जागा और थोड़ा सोया रहता है। इसमें अस्पष्ट अनुभवों और भावों का घालमेल रहता है इसलिए व्यक्ति कब कैसे स्वप्न देख ले कोई भरोसा नहीं।

यह ऐसा है कि भीड़भरे इलाके से सारी ट्रेफिक लाइटें और पुलिस को हटाकर स्ट्रीट लाइटें बंद कर देना। ऐसे में व्यक्ति को झाड़ का हिलना भी भूत के होने को दर्शाएगा या रस्सी का हिलना सांप के पीछे लगने जैसा होगा। हमारे स्वप्न दिनभर के हमारे जीवन, विचार, भाव और सुख-दुख पर आधारित होते हैं। यह किसी भी तरह का संसार रच सकते हैं।

3.सुषुप्ति अवस्था : गहरी नींद को सुषुप्ति कहते हैं। इस अवस्था में पांच ज्ञानेंद्रियां और पांच कर्मेन्द्रियां सहित चेतना (हम स्वयं) विश्राम करते हैं। पांच ज्ञानेंद्रियां- चक्षु, श्रोत्र, रसना, घ्राण और त्वचा। पांच कर्मेन्द्रियां- वाक्, हस्त, पैर, उपस्थ और पायु। सुषुप्ति की अवस्था चेतना की निष्क्रिय अवस्था है। यह अवस्था सुख-दुःख के अनुभवों से मुक्त होती है। इस अवस्था में किसी प्रकार के कष्ट या किसी प्रकार की पीड़ा का अनुभव नहीं होता। इस अवस्था में न तो क्रिया होती है, न क्रिया की संभावना। मृत्यु काल में अधिकतर लोग इससे और गहरी अवस्था में चले जाते हैं।

4. तुरीय अवस्था : चेतना की चौथी अवस्था को तुरीय चेतना कहते हैं। यह अवस्था व्यक्ति के प्रयासों से प्राप्त होती है। चेतना की इस अवस्था का न तो कोई गुण है, न ही कोई रूप। यह निर्गुण है, निराकार है। इसमें न जागृति है, न स्वप्न और न सुषुप्ति। यह निर्विचार और अतीत व भविष्य की कल्पना से परे पूर्ण जागृति है। इस अवस्था में योगी सुषुप्ति जैसी निष्क्रिय अवस्था में रहता है लेकिन साथ ही साथ वह अति जागृत अवस्था में होता है।

यह उस साफ और शांत जल की तरह है जिसका तल दिखाई देता है। तुरीय का अर्थ होता है चौथी। इसके बारे में कुछ कहने की सुविधा के लिए इसे संख्या से संबोधित करते हैं। यह पारदर्शी कांच या सिनेमा के सफेद पर्दे की तरह है जिसके ऊपर कुछ भी प्रोजेक्ट नहीं हो रहा।

जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति आदि चेतनाएं तुरीय के पर्दे पर ही घटित होती हैं और जैसी घटित होती हैं, तुरीय चेतना उन्हें हू-ब-हू हमारे अनुभव को प्रक्षेपित कर देती है। यह आधार-चेतना है। यहीं से शुरू होती है आध्यात्मिक यात्रा, क्योंकि तुरीय के इस पार संसार के दुःख तो उस पार मोक्ष का आनंद होता है। बस, छलांग लगाने की जरूरत है।

5.तुरीयातीत अवस्था : तुरीय अवस्था के पार पहला कदम तुरीयातीत अनुभव का। यह अवस्था तुरीय का अनुभव स्थाई हो जाने के बाद आती है। चेतना की इसी अवस्था को प्राप्त व्यक्ति को योगी या योगस्थ कहा जाता है।

इस अवस्था में अधिष्ठित व्यक्ति निरंतर कर्म करते हुए भी थकता नहीं। इस अवस्था में काम और आराम एक ही बिंदु पर मिल जाते हैं। इस अवस्था को प्राप्त कर लिया, तो हो गए जीवन रहते जीवन-मुक्त। इस अवस्था में व्यक्ति को स्थूल शरीर या इंद्रियों की आवश्यकता नहीं रहती। वह

इनके बगैर भी सबकुछ कर सकता है। चेतना की तुरीयातीत अवस्था को ही सहज-समाधि भी कहते हैं।

6. भगवत चेतना : तुरीयातीत की अवस्था में रहते-रहते भगवत चेतना की अवस्था बिना किसी साधना के प्राप्त हो जाती है। इसके बाद का विकास सहज, स्वाभाविक और निस्प्रयास हो जाता है।

इस अवस्था में व्यक्ति से कुछ भी छुपा नहीं रहता और वह संपूर्ण जगत को भगवान की सत्ता मानने लगता है। यह एक महान सिद्ध योगी की अवस्था है।

7. ब्राह्मी चेतना : भगवत चेतना के बाद व्यक्ति में ब्राह्मी चेतना का उदय होता है अर्थात् कमल का पूर्ण रूप से खिल जाना। भक्त और भगवान का भेद मिट जाना। अहम् ब्रह्मास्मि और तत्त्वमसि अर्थात् मैं ही ब्रह्म हूं और यह संपूर्ण जगत ही मुझे ब्रह्म नजर आता है।

इस अवस्था को ही योग में समाधि की अवस्था कहा गया है। जीते-जी मोक्ष।

<http://hindi.webdunia.com/> से साभार

चेतना व शुन्य

अगर आप ब्रह्मांड की हर एक भौतिक चीज़ को ले, आप को उनके भीतर आखिर में " कुछ भी नहीं (NOTHINGNESS) " ही मिलेगा। लेकिन What is Nothing? NOTHING पूरी तरह से खाली जगह, पूर्णरूप से ठंडा, मौन और अंधकार है। NOTHING अनंत और अविनाशी है। यह हिलता नहीं है और उसकी जरूरत भी नहीं है। यह पहले से ही हर जगह पर है। ब्रह्मांड में हमारे स्वयं के शरीर सहित अधिक से अधिक 99.99% खालीपन है।

सभी भौतिक चीज़ें जो परमाणुओं से बनी हैं ज्यादातर खाली जगह हैं। अगर परमाणु के न्यूक्लियस का आकर एक कंचे जितना होता तो उसका इलेक्ट्रॉन धूल के कण जितना होता और आधा माईल दूर से न्यूक्लियस का चक्कर काट रहा होता। अगर आप परमाणु के न्यूक्लियस और इलेक्ट्रॉन को छोड़ के अपने शरीर की सारी खाली जगह को मिटा दे, तो 7 अरब जितने मानव शरीर एक चीनी के दाने जितनी जगह में फिट हो जायेंगे। ब्रह्माण्ड की हर भौतिक चीज़ों में इतनी खाली जगह होती है।

हमें मालूम है जन्नत की हकीकत...

हास्य-व्यंग्य

आत्मा की आवाज़

डॉ. प्रेम जनमेजय

आजकल आत्मा की आवाज़ की जैसे सेल लगी हुई है। जिसे देखो वो ही आत्मा की आवाज़ सुनाने को उधार खाए बैठा है। आप न भी सुनना चाहें, तो जैसे क्रेडिट कार्ड, बैंकों के उधारकर्त्ता, मोबाईल कंपनियों के विक्रेता अपनी कोयल-से मधुर स्वर में आपको अपनी आवाज़ सुनाने को उधार खाए बैठे होते हैं वैसे ही आत्मा की आवाज़ का धंधा चल रहा है। कोई भी धार्मिक चैनल खोल लीजिए, स्वयं अपनी आत्मा को सुला चुके ज्ञानीजन आपकी आत्मा को जगाने में लगे रहते हैं। आपकी आत्मा को जगाने में उनका क्या लाभ, प्यारे जिसकी आत्मा मर गई हो वो धरम-करम कहाँ करता है, धरम-करम तो जगी आत्मा वाला करता है और धरम-करम होता तभी तो धार्मिक-व्यवसाय फलेगा और फूलेगा। इसीलिए जैसे इस देश में भ्रष्टाचार के सरकारी दफ्तरों में विद्यमान होने से वातावरण जीवंत और कर्मशील रहता है वैसे ही आत्मा के शरीर में जगे रहने से 'धर्म' जीवंत और कर्मशील रहता है।

मैं संजय की तरह देख रहा हूँ (अब आप ये मत पूछिएगा कि तुम संजय हो तो इस राष्ट्र में धृतराष्ट्र कौन है, वरना लोगों को आप ही धृतराष्ट्र नज़र आएँगे) कुछ रिरिया रिरिया कर भीख माँगते स्वर चिल्ला रहे हैं, "अल्लाह के नाम पर, मौला के नाम पर, हे कोई श्रोता, हे कोई श्रोती जो मेरी आत्मा की आवाज़ सुन ले। सुन लो भैया बहुत छोटी-सी आवाज़ है, एक मिनिस्ट्री का सवाल है बाबा।"

मैंने उनसे पूछा, "क्या, आपको सुनाई देता है?"

उन्होंने मुझे घूरा जैसे अमेरिका ने इराक को घूरा हो और कहा, "मुझे बहरा समझा है, हमसे मजाक करता है? तेरा दिमाग ठीक है, वरना ढूँढ़ तेरे यहाँ भी हथियार। हमसे मजाक करना बहुत महँगा पड़ता है, प्यारे! कभी न करना मजाक, हमसे और किसी पुलिस वाले से। समझ गए न प्यारे जी" और मैं प्यारा बढ़ती हुई महँगाई के बावजूद महँगे मजाक से नहीं डरा और पूछ बैठा, "आपको आत्मा की आवाज़ सुनाई देती है?"

वे बोले, "पागल है क्या, मैं कोई नेता हूँ जो आलतू-फालतू आवाज़ें सुनता रहूँ।"

सच आजकल आत्मा की आवाज़ आलतू-फालतू ही हो गई है। कुछ के यहाँ आत्मा की आवाज़ पालतू हो गई है, जब चाहा भोंकवा दिया।

कबीर के समय में माया ठगिनी थी, आजकल आत्मा ठगिनी है। माया के मायाजाल को तो आप जान सकते हैं, आत्मा के आत्मजाल को देवता नहीं जान सके आप क्या चीज़ हैं। सुना गया है कि आजकल आत्मा की ठग विद्या को देखकर बनारस के ठगों ने अपनी दूकानों के शटर बंद कर लिए हैं। सुना गया है कि विदेशी संस्थागत निवेशक ऐसी आत्माओं को ऊँची तन्खवाहों पर भरती कर रहे हैं। जैसे हम कपड़े बदलते हैं, आजकल जैसे हम अपनी आस्थाएँ बदलते हैं वैसे ही आत्मा शरीर बदलती है – कभी शासक दल का नेता होती है, कभी विरोधी दल की और कभी किसी बाहुबली के शरीर की। सुअवसर देख उनकी आत्मा फुँकारने लगी।

मैंने कहा, “आप इस तरह क्यों फुँकार रहे हैं, देशसेवक?”

वे बोले, “हमारी आत्मा पर बोझ बढ़ गया है। इतने एम.पी. के साथ एलेक्शन जीते, मंत्री-संत्री बनने की तो बात दूर कौनो कमेटी तक में नहीं रखा। हमने देश सेवा के लिए लाखों रुपया खर्च किया है। अब हम आत्मा की आवाज़ नहीं सुनेंगे और सुनाएँगे तो खाएँगे क्या? लोग तो चुनाव के बाद दूध-मलाई खाएँ और हम महाराणा प्रताप बने घास की रोटियाँ? बहुत ना इन्साफ़ी है। माना हम महाराणा प्रताप के वंशज के हैं पर हमें चुनाव लड़ना होता है। हम जनता के प्रतिनिधि हैं। हम तो अपनी आत्मा की आवाज़ सुनाकर रहेंगे ैय्ये।”

मैंने पूछा, “किसी ने आपकी आत्मा की आवाज़ सुनी?”

वे बोले, “पगला गए हैं क्या? कोई सुन लेता तो मंत्रालय में न बैठे होते। यहाँ लोग ससुरे तीन एम.पी. लेकर दो-दो मंत्रालय हथियाए बैठे हैं और हम तीस लेकर घास की भीख माँग रहे हैं। हमने आपसे कह दिया न कि दूसरे तो देशसेवा के नाम पर दूध-मलाई खाएँ और हम पहले घास की रोटियाँ खाएँ, नहीं चलेगा।”

“आपको किसी ने भीख भी न दी तो?”

“तो उचित अवसर का इंतज़ार करेंगे। आत्मा की आवाज़ कभी मरती नहीं है। कभी न कभी तो सुननी पड़ती है भैया, वरना प्रजातंत्र कैसे चलेगा सरकार कैसे चलेगी?”

“तो अभी क्या करेंगे, आत्मा की आवाज़ का?”

“अभी सुला देंगे।”

आत्मा की आवाज़ कितनी सुविधाजनक हो गई है, जब चाहा जगा दिया जब चाहा सुला दिया जैसे घर की बूढ़ी अम्मा, जब चाहा मातृ-सेवा के नाम पर, दोस्तों को दिखाने के लिए ड्राइंग रूम में बिठा लिया और जब चाहा कोने में पटक दिया।

पाँच साल में एक बार आधा बार आत्मा की आवाज़ सुन लेना ही तो प्रजातंत्र है, दोस्तो।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से चेतना



मनोविज्ञान की दृष्टि से चेतना मानव में उपस्थित वह तत्व है जिसके कारण उसे सभी प्रकार की अनुभूतियाँ होती हैं। चेतना के कारण ही हम देखते, सुनते, समझते और अनेक विषय पर चिंतन करते हैं। इसी के कारण हमें सुख-दुःख की अनुभूति भी होती है और हम इसी के कारण अनेक प्रकार के निश्चय करते तथा अनेक पदार्थों की प्राप्ति के लिए चेष्टा करते हैं।

मानव चेतना की तीन विशेषताएँ हैं। वह ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक होती है। भारतीय दार्शनिकों ने इसे सच्चिदानंद रूप कहा है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के विचारों से उक्त निरोपज्ञा की पुष्टि होती है। चेतना वह तत्व है जिसमें ज्ञान की, भाव की और व्यक्ति, अर्थात् क्रियाशीलता की अनुभूति है। जब हम किसी पदार्थ को जानते हैं, तो उसके स्वरूप का ज्ञान हमें होता है, उसके प्रति प्रिय अथवा अप्रिय भाव पैदा होता है और उसके प्रति इच्छा पैदा होती है, जिसके कारण या तो हम उसे अपने समीप लाते अथवा उसे अपने से दूर हटाते हैं।

चेतना को दर्शन में स्वयंप्रकाश तत्व माना गया है। मनोविज्ञान अभी तक चेतना के स्वरूप में आगे नहीं बढ़ सका है। चेतना ही सभी पदार्थों को, जड़ चेतन, शरीर मन, निर्जीव जीवित, मस्तिष्क स्नायु आदि को बनाती है, उनका स्वरूप निरूपित करती है। फिर चेतना को इनके द्वारा समझाने की चेष्टा करना अविचार है। मेगडूगल महाशय के कथनानुसार जिस प्रकार

भौतिक विज्ञान की अपनी ही सोचने की विधियाँ और विशेष प्रकार के प्रदत्त हैं उसी प्रकार चेतना के विषय में चिंतन करने की अपनी ही विधियाँ और प्रदत्त हैं। अतएव चेतना के विषय में भौतिक विज्ञान की विधियों से न तो सोचा जा सकता है और न उसके प्रदत्त इसके काम में आ सकते हैं। फिर भौतिक विज्ञान स्वयं अपनी उन अंतिम इकाइयों के स्वरूप के विषय में निश्चित मत प्रकाशित नहीं कर पाया है जो उस विज्ञान के आधार हैं। पदार्थ, शक्ति, गति आदि के विषय में अभी तक कामचलाऊ जानकारी हो सकी है। अभी तक उनके स्वरूप के विषय में अंतिम निर्णय नहीं हुआ है। अतएव चेतना के विषय में अंतिम निर्णय की आशा कर लेना युक्तिसंगत नहीं है। चेतना को अचेतन तत्व के द्वारा समझाना, अर्थात् उसमें कार्य-कारण संबंध जोड़ना सर्वथा अविवेकपूर्ण है।

चेतना को जिन मनोवैज्ञानिकों ने जड़ पदार्थ की क्रियाओं के परिणाम के रूप में समझाने की चेष्टा की है अर्थात् जिन्होंने इसे शारीरिक क्रियाओं, स्नायुओं के स्पंदन आदि का परिणाम माना है, उन्होंने चेतना की उपस्थिति को ही समाप्त कर दिया है। उन्होंने चेतना की उपस्थिति को ही समाप्त कर दिया है। पैवलाफ और वाटसन महोदय के चिंतन का यही परिणाम हुआ है। उनके कथनानुसार मन अथवा चेतना के विषय में मनोविज्ञान में सोचना ही व्यर्थ है। मनोविज्ञान का विषय मनुष्य का दृश्यमान व्यवहार ही होना चाहिए।

चेतना के शरीर में संबंध के विषय में मनोवैज्ञानिकों के विभिन्न मत हैं। कुछ के अनुसार मनुष्य के बृहत् मस्तिष्क में होनेवाली क्रियाओं, अर्थात् कुछ नाड़ियों के स्पंदन का परिणाम ही चेतना है। यह अपने में स्वतंत्र कोई तत्व नहीं है। दूसरों के अनुसार चेतना स्वयं तत्व है और उसका शरीर से आपसी संबंध है, अर्थात् चेतना में होनेवाली क्रियाएँ शरीर को प्रभावित करती हैं। कभी-कभी चेतना की क्रियाओं से शरीर प्रभावित नहीं होता और कभी शरीर की क्रियाओं से चेतना प्रभावित नहीं होती। एक मत के अनुसार शरीर चेतना के कार्य करने का यंत्र मात्र हैं, जिसे वह कभी उपयोग में लाती है और कभी नहीं लाती। परंतु यदि यंत्र बिगड़ जाए, अथवा टूट जाए, तो चेतना अपने कामों के लिए अपंग हो जाती है। कुछ गंभीर मनोवैज्ञानिक विचारकों द्वारा विज्ञान की वर्तमान प्रगति की अवस्था में उपर्युक्त मत ही सर्वोत्तम माना गया है।

<https://hi.wikipedia.org/wiki/> से साभार

*A letter to a friend...***"तुम्ही से"**

नव अस्तित्व की तलाश

नव चेतना का दर्पण

मान्यवर

...क्यों न हम कुछ ऐसी बातें मिल बांटें जिन का संबंध हम सब से है.

...मानव सभ्यता के शिशु काल से ही मानवता दो श्रेणियों में बट गई. एक श्रेणी में वे प्रबुद्ध मानव हैं, स्त्री और पुरुष दोनों ही, जो मन की गहराई में उतरते हैं, जो मानवता को रास्ता दिखाते हैं. दूसरी श्रेणी में शेष सभी मानव जो अपने कर्म और अपनी इच्छायों के जाल में उलझे हैं, मन से ज्यादा सड़कों पर उतरते हैं. हम केवल इन दो श्रेणियों की ही बात क्यों न करें. इस प्रथम श्रेणी के मानव भी कर्मशील हैं और उन का कर्म उन के मस्तिष्क पटल पर होता है और वे प्रकृति के महान् पुत्र हैं जो उस के भेद जानने में अपना ज्यादा समय लगाते हैं और उस की सौगातों का आनंद उठाने में कम. यह प्रकृति का कर्ज है हम पर कि उसने मानव को इतना बढ़िया मस्तिष्क दिया है और वे प्रकृति की कोख में गहरे उतर कर उस कजूर को उतारने में लगे हैं. प्रकृति के अंतस् में उतर कर वे इस तथ्य से एकमत होते हैं कि हम स्वयं प्रकृति से अलग नहीं. तो क्या प्रकृति ही प्रकृति की खोज कर रही है? जब वे गंभीरता से प्रकृति के ऐसे गहन सत्य खोज निकालते हैं तो शेष लोग उनका अनुगमन करते हैं, उन से लाभान्वित होते हैं.

...पर दुर्भाग्यवश से यह बात अधूरा सत्य है. हमेशा ही ऐसा हो यह ज़रूरी नहीं. ये तथाकथित प्रबुद्ध मानव शेष समाज से निष्काशित प्राणि हैं. जीवन को बदल सकने योग्य उन का परिज्ञान उन की अंत्रदृष्टि केवल धूल चाटती पुस्तकों का हिस्सा हो कर रह जाती है. या उन पुस्तकों का जिन्हें केवल पूजातुल्य माना जाता है और पूजा के समय ही उन का गान होता है. उन में संकलित महान् सत्यों को लोग अपनी मन बुद्धि से दूर रखते हैं. लोग इस बुद्धिजीवी वर्ग के काम से अनजान रहते हैं. हमारे आस-पास ऐसे लोगों की कमी नहीं जो अर्थ चारे में उलझी अपनी अधूरी दृष्टि से साधारण और प्रबुद्ध मानव में अंत्र नहीं कर पाते. आत्म-विवेचना से नितांत दूर ये लोग विश्व के प्रत्येक बड़े धर्म के masses कहलाते हैं और यही लोग मानव निर्मित मानव संकटों का कारण बनते हैं.

...दूसरी ओर हमारा यह प्रबुद्ध मानव भी कलियुग-ग्रस्त हो गया है. तमस् का यह युग उस की बुद्धि को भी भ्रमित कर रहा है. मस्तिष्क का पसीना बहा कर की कमाई को वह अति- साधारण

दुनियावी कार्यों में लगा रहा है। उसने अब ऐसी विद्यायों का समर्थन शुरू कर दिया है जिन में न अध्यात्मिक ईमानदारी है और न वैज्ञानिक सच्चाई। जो तमस् के इस युग में मानव में और अंधापन ला रही हैं। तमस् के इस युग में अधिक ज्ञान ही अज्ञान का कारण बन रहा है। मानवीय मन कभी भी कपट नहीं छोड़ पाया। कपट और ज्ञान ने मानवीय मन में अब गहरा संयोजन कर लिया है। ज्ञान और ज्ञानी जनों से लोगों का विश्वास उठ रहा है। ज्ञान तकनीकी हो या अध्यात्मिक अब केवल मानवीय शोषण का तरीका बन रहा है।

...प्राचीन काल में ही ऋषि लोगों ने ज्ञान की सीमा को समझ लिया था। वेद यानि ज्ञान से वेदांत यानि ज्ञान का अंत तक जाने वाले उन महान् मानवों ने केवल आत्मानभूति को महान्तम ज्ञान माना है। लेकिन यह एक ऐसा ज्ञान है जिस के संबंध में कभी एकमत नहीं बन पाया है। जीवन की समग्रता का ज्ञान, केवल बौद्धिक ज्ञान नहीं बल्कि परिज्ञान (metacognition), बुद्धि नहीं आत्मा जिससे प्रभावित हो, भीतरी व बाह्य दोनों, पर्यावरण जिस से अलग नहीं ही समग्र आत्मानभूति है। ... "तुम्ही से" से हमारा प्रयोजन यही है। सूचना (Information) स्मरणशक्ति (memory) व रसहीन शुष्क बौद्धिकता का यह त्रयोज मानवीय नसल के लिये घातक बन रहा है। यह केवल उस में प्रतिस्पर्धा की भावना को बढ़ावा दे रहा है। इस भावना से प्रेरित वे मानवीय संसाधनों को बेदर्दी से लूटते हैं। एक दूसरे से आगे बढ़ने की यह होड़ हमारी पृथिव व पर्यावरण को कितना गहरा नुकसान पहुंचा रही है इस का अंदाज़ा लगाना आसान नहीं। हम अपनी ही आगामी नसल को क्या एक ठूठ पृथिव दे कर जायेंगे?

... "तुम्ही से" द्वारा ज्ञान की सीमा को, चेतना को, पृथिव व पर्यावरण की चेतना को जन-मानस् तक पहुंचाने में हमें आप के आशीर्वाद की जरूरत है। हमें पृथिव पर्यावरण चेतना व आत्मानभूति जनक आप की रचनायों की जरूरत है।

... "तुम्ही से" का अभी केवल डिजिटल प्रकाशन हो रहा है। आगामी महीनों में "प्रिंट वर्शन" अपेक्षित है।

....साहित्य के साथ अध्यात्म से हमारा तात्पर्य अगर कोई है तो यह वह अध्यात्म है जो कबीर दादु मीरा सरीखे लोक-आत्मा चितरे महा मानवों को आत्मसात किये स्वामि विवेकानन्द, महा-पंडित राहुल सांकृत्यायन स्वामि राम तीर्थ से होता हुआ इस इक्कीसवीं सदी में भी कवि कथाकारों के मन से बेमुहारा फूट पड़ता है।

... 'तुम' के आगामी अंकों- 'ज्ञान की सीमा', 'ज्ञान और अनुभूति' 'परमात्मा है क्या', चेतना है क्या', 'क्या भला क्या बुरा'; इत्यादि से संबंधित आप की रचनायों सादर आमंत्रित हैं तुम्ही से का प्रथमांक यहाँ पढ़ें

https://www.scribd.com/embeds/297771144/content?start_page=1&view_mode=scroll&show_recommendations=true

आप की प्रतिक्रिया

आप की प्रतिक्रिया हमारे लिये अमूल्य है

हमारा यह प्रयास आप के सहयोग के बिना अधूरा है.

आप का एक मात्र सहयोग "आप की प्रतिक्रिया" है.

आप अपने पर्यावरण के विषय के बारे में क्या सोचते हैं.

आप तत्कालीन धार्मिक राजनीतिक व अध्यात्मिक अर्थ-तंत्र के बारे क्या राय रखते हैं.

पर्यावरण एवं मानवीय चेतना के बारे में आप अपना व्यक्तिगत अनुभव पाठकों से बांट सकते हैं.

इस से संबंधित आप अपनी रचना हमें भेज सकते हैं.

आप फेस बुक या इ-मेल या से भी अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकते हैं.

आप हमें बतायें कि हमारे प्रयास में क्या अधूरा है अभी

संपर्क सूत्र-

इ-मेल- abcinnerworld@gmail.com

Facebook <https://www.facebook.com/swaranj.omcawr>



‘तुम्ही से’ का आगामी अंक- ‘परमात्मा है क्या?’

परमात्मा के बारे में मानव सभ्यता के आरम्भ काल से ही मानव की उत्सुकता रही है. परमात्मा के अनेकों नाम हैं. जैसे गॉड, ईश्वर अल्लाह, यहोवा, ब्रह्म इत्यादि. लेकिन परमात्मा है क्या? परमात्मा अभी तक मानव के लिए अबूझ पहेली क्यों बन हुआ है. परमात्मा के सम्बन्ध में अलग अलग पहलुओं से ली गई जानकारी एवं विचार चर्चा.... आगामी अंक में

(तुम्ही से का वर्षा ऋतू अंक ... अगस्त सितम्बर में जारी)

हमारी शायरी

(स्थाई स्तम्भ)

गज़ल शायर की मक़बूलियत का सबूत भी है और सबब भी। कुछ शायर ऐसे होते हैं, जो अपनी किसी खास गज़ल के कारण अमर हो जाते हैं, फिर वह गज़ल उनकी परछाई बन जाती है और वो उस गज़ल की। ऐसा ही कुछ मुद्दा यहाँ भी है। "मन आँगन में शहर बसा है", "चलो उन मंज़रों के साथ चलते हैं", "उसे कहना कभी मिलने चला आए", "तुम ही अच्छे थे", "पहले पहल तो ख़वाबों का दम भरने लगती हैं", "इस बार दिल ने तुझसे ना मिलने की ठानी है", "तुम ने सच बोलने की ज़ुरत की", "ये लोग अब जिस से इनकार करना चाहते हैं", "ये और बात कि खुद को बहुत तबाह किया", "कहीं तुम अपनी किस्मत का लिखा तब्दील कर लेते" - ये सारी कुछ गज़लें हैं, जो उनके नाम पर दर्ज हैं, लेकिन जिस गज़ल ने उन्हें अर्थ तक पहुँचाया वो थी- "मैं ख़याल हूँ किसी और का, मुझे सोचता कोई और है।" आप हैरत में पड़ गए ना, पहले पहल मैं भी हैरत में पड़ गया था क्योंकि इन्हीं अल्फ़ाज़ों से सजा एक नज़्म "तू प्यार है किसी और की, तुझे चाहता कोई और है", हमारे यहाँ गूँजा करता है। क्या कीजिएगा....हमारी नकल करने की आदत गई नहीं है। दिन में दस बार क्यों न हम पाकिस्तान को भला-बुरा कहें,लेकिन गाने चुराने के लिए उसी की ओर हाथ पसारकर खड़े हो जाते हैं। हाँ तो जहाँ तक इस गज़ल की बात है, इसे न सिर्फ़ "मुन्नी बेग़म" ने गाया है, बल्कि कई सारे फ़नकारों ने इस पर अपना गला साफ़ किया है, यहाँ तक कि उस्ताद नुसरत फ़तेह अली खान साहब की भी आवाज़ इस गज़ल को नसीब हुई है। लीजिए इतनी बात हो गई,लेकिन अब तक हमने उस शायर की शिनाख़्त नहीं की। तो भाईयो, जनाब "सलीम कौसर" साहब ही वो खुशकिस्मत शायर है। इससे पहले कि हम गज़ल का लुत्फ़ उठायें,क्यों न इन साहब का ही लिखा एक शेर देख लिया जाए:

मैं ख़याल हूँ किसी और का मुझे सोचता कोई और है
सर-ए-आईना मेरा अक्स है पस-ए-आइना कोई और है

(सर-ए-आईना = आईने के सामने), (अक्स = प्रतिबिम्ब, परछाई), (पस-ए-आइना = आईने के पीछे)

में किसी के दस्त-ए-तलब में हूँ तो किसी के हर्फ़-ए-दुआ में हूँ
में नसीब हूँ किसी और का मुझे माँगता कोई और है

(दस्त-ए-तलब = इच्छा हाथों की), (हर्फ़-ए-दुआ = दुआ केअक्षर)

अजब ऐतबार-ओ-बेऐतबारी के दर्मियाँ है ज़िन्दगी
में करीब हूँ किसी और के मुझे जानता कोई और है

(ऐतबार-ओ-बेऐतबारी = विश्वास और अविश्वास), (दर्मियाँ = बीच में)

तेरी रोशनी मेरी ख़दो-ख़ाल से मुख्तलिफ़ तो नहीं मगर
तू करीब आ तुझे देख लूँ तू वही है या कोई और है

(ख़दो-ख़ाल = शारीरिक सौंदर्य), (मुख्तलिफ़ = अलग-अलग, भिन्न)

तुझे दुश्मनों की ख़बर न थी मुझे दोस्तों का पता नहीं
तेरी दास्ताँ कोई और थी मेरा वाक़या कोई और है

[(दास्ताँ = वृतांत, कथा, वर्णन), (वाक़या = घटना, वृतांत, समाचार)]

वही मुन्सिफ़ों की रिवायतें वही फैसलों की इबारतें
मेरा जुर्म तो कोई और था पर मेरी सज़ा कोई और है

(मुन्सिफ़ = इन्साफ़ या न्याय करने वाला), (इबारत = लेख, मजमून)

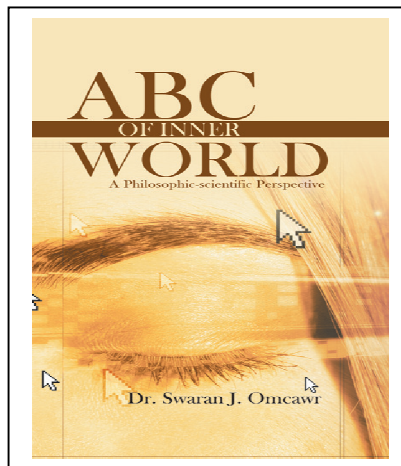
कभी लौट आये तो न पूछना सिर्फ़ देखना बड़े ग़ौर से
जिन्हें रास्ते में ख़बर हुई कि ये रास्ता कोई और है

जो मेरी रियाज़त-ए-नीमशब को “सलीम” सुबह न मिल सकी
तो फिर इस के माने तो ये हुए के यहाँ ख़ुदा कोई और है

(रियाज़त-ए-नीमशब = आधी रात तक किया परिश्रम, कष्ट)

अंतिम पन्ना

पुस्तकें



‘अंत्रीय ब्रह्मण्ड का क ख ग’ (ABC of Inner World) में डा. स्वर्ण जे. ओम्कार दो चरम सीमाओं से आध्यात्मिकता को मुक्त करने के लिए संघर्षरत हैं -पहला है कठोर बुद्धिवाद ... और दूसरा सच्चाई के केवल निष्कर्ष की पूजा प्रति हमारा लगाव. अपने अद्वितीय स्पष्ट दृष्टिकोण के साथ वे पाठक के मन में विचारों की एक श्रृंखला बनाने का प्रयास करते हैं. साधारण व अपरिपक्व विचारों से प्रारम्भ करके वे अधिक से अधिक जटिल विचार की ओर बढ़ते हैं और अहसास के विस्फोट के अन्तिम शिखर तक पाठक को ले जाने का प्रयास करते हैं.

प्रत्येक पाठक में ऐसा अहसास का विस्फोट पैदा हो यह निर्भर करता है कि पाठक इन विचारों को कैसे लेता है शब्दों को बुद्धि द्वारा समझता है या इस प्रयास के लिए उस में कोई व्यक्तिपरक जागरूकता का आविर्भाव होता है!

पाठक के मन में रचनात्मक अंतर्दृष्टि बनाने के लिए प्रस्तुत गद्य में आध्यात्मिकता के विषय में समकालीन बहाव पर परिच्छेद संकलित हैं. साथ ही साथ यह प्रयास है कि अनावश्यक रूप से अवांछित जानकारी से पाठक को उबायें नहीं

बल्कि व्यक्तिपरक जागरूकता के शिखर तक ले जाने के लिए उस के मन की अगुआई करें. अपने गद्य में अक्सर वे इस ‘व्यर्थ बेतुकी गति से अग्रसर ब्रह्मांड’ की अनर्थक बौद्धिक समझ को छोड़ थोड़ी देर के लिए आत्मीय अनुभूति का बोध करने का आव्हान करते हैं! अनर्थक बौद्धिक समझ के संस्थागत निर्माण के प्रयास में हम जीवन के बेहतरीन साल बरबाद करते हैं. वे ऐसे बौद्धिक मन की चरणबद्ध समाप्ति की बात करते हैं. वे चुपचाप सब समझ से परे अहसास की गहराई में प्रवेश करने की बात करते हैं!

‘डा. स्वर्ण जे. ओम्कार’ (ज. 1960), भारतीय मूल के लेखक और मानव शरीर विज्ञान में स्नातकोत्तर हैं. वे एक मेडिकल कालेज में एसोसिएट प्रोफेसर हैं. वे स्वयं शिक्षित, आत्म निर्देशित आध्यात्मिक उत्साही हैं और आम तौर पर अपने व्याख्यान में समग्रता और पर्यावरण चेतना को सम्विहित करते हैं.

उपरोक्त पुस्तक निम्न लिखित ऑनलाइन बुक स्टोर्स से प्राप्त की जा सकती है.

[Amazon](#)

[Flinkart](#)